चौथी दुनिया

www.chauthiduniya.com

हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

1986 से प्रकाशित | 25 सितंबर– 01 अक्टूबर 2017 | नई दिल्ली | हर शुक्रवार को प्रकाशित | Postal Regn. No. DL (ND)-11/6139/2015-17, RNI No. DELHIN/2009/30467

देश में मोदी सरकार, थम नहीं रहा किसानों पर अत्याचार

जीतती सरकार हारते किसान

पहले शाइनिंग इंडिया फिर हो रहा भारत निर्माण और अब न्यू इंडिया की बात हो रही है, लेकिन किसान आज भी मुफलिसी और मौत के बीच जूझ रहे हैं. आजादी के बाद से अब तक किसानों के लिए आंदोलन ही वो माध्यम रहा है, जिसके जरिए वे सरकारों तक अपने हक़ की आवाज पहुंचाते रहे हैं. लेकिन सरकारें उन आवाजों को सुनने और किसानों की समस्या सुलझाने की जगह आंदोलन को असफल करने की कोशिश में लग जाती हैं. कैसे, समझिए इस रिपोर्ट के जरिए...

निरंजन मिश्रा

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने किसानों की आमदनी दोगुनी करने के लिए 2022 की समयसीमा तय की है. फिलहाल, देश का किसान मंडी में अपना प्याज 50 पैसे किलो बेचता रहे, दूध सड़क पर फेंकता रहे, आत्महत्या करता रहे और जब सब कर के थक–हार जाए तो सड़क पर उतर कर आंदोलन करे. लेकिन, किसान नहीं जानते कि जैसे इस सरकार में इंस्तीफे नहीं होते, वैसे ही इस सरकार में आंदोलन की भी कोई गुंजाइश नहीं है. शायद तभी मन्दसौर से लेकर महाराष्ट्र, तमिलनाडु से लेकर राजस्थान तक किसानों ने आंदोलन तो किए, लेकिन उनका आंदोलन अंतिम परिणाम तक पहुंचते–पहुंचते दम तोड़ देता है. सरकारी गोली से लेकर सरकारी वादों के चक्रव्यूह में फंसकर किसान रह जाते हैं. चाहे कर्ज माफी की बात हो या स्वामीनाथन आयोग की सिफारिश के मुताबिक 50 फीसदी अतिरिक्त एमएसपी दिए जाने की मांग, किसानों की हर मांग को सरकार एक ऐसे जाल में उलझा कर पेश करती है, जिसे किसानों के लिए समझना भी मुश्किल, मानना भी मुश्किल और टालना भी मुश्किल हो जाता है. अंततः किसान आंदोलन राष्ट्रव्यापी स्वरूप अख्तियार करने से पहले ही खत्म हो जाता है. पिछले कुछ महीनों में महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु के किसानों का जंतर–मंतर पर अनशन और सितंबर के महीने में राजस्थान के सीकर में लाखों किसानों का महाधरना, प्रदर्शन हुआ. सभी आंदोलनों की मांग करीब–करीब एक ही थी. कर्ज माफी, स्वामीनाथन आयोग की सिफारिश को लागू करना, उपज का उचित मूल्य मिलना आदि, लेकिन इन तीनों आन्दोलनों का हश्र क्या हुआ, इसे देखते और समझते हैं. सबसे पहले बात करते हैं राजस्थान के किसानों के आंदोलन की. सीकर में 1 से 13 सितम्बर तक चले व्यापक किसान आंदोलन की जो परिणति हुई, उसने साबित कर दिया कि मौजूदा सरकार देश में किसी भी आंदोलन को उस मुकाम तक कभी नहीं पहुंचने देगी, जहां पहुंचकर किसान समस्या इस देश के लिए एक राष्ट्रीय मुद्दा बन सके.

सीकर आंदोलन को असफल करने की कोशिश

आंदोलन की व्यापकता और अपनी मांगों के प्रति किसानों की दृढ़ता को देखते हुए सरकार ने राजस्थान के किसानों की मांगों को पूरा कर उनकी समस्याओं का स्थायी समाधान करने की बजाय उन्हें आधी–अधूरी सहमति और आश्वासनों तक समेट दिया है. हालांकि इससे पहले राजस्थान सरकार ने पूरी कोशिश की कि किसानों का ये आंदोलन असफल हो जाय. पहले तो जयपुर पूरी तरह से सीकर को नजरअंदाज करता रहा, लेकिन जब 4 सितम्बर को सीकर में किसानों द्वारा मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे का पुतला जलाया गया और पूरे सीकर में बंद हुआ, तब जाकर सरकार को इस आंदोलन की व्यापकता समझ आई. लेकिन तब भी सरकार इसे स्थानीय स्तर पर सुलझाने के प्रयास में ही लगी रही. जिला प्रशासन की तरफ से किसानों को बातचीत के लिए बुलाया गया. कलेक्टर, कमिश्नर और आईजी के साथ अखिल भारतीय किसान सभा के नेताओं की वार्ता हुई. लेकिन जैसा कि होना था, यह वार्ता बेनतीजा रही, क्योंकि किसानों की 11 सूत्री मांगों को पूरा करना जिला प्रशासन के वश की बात नहीं थी. आंदोलन खत्म करने के लिए सरकार की तरफ से एक और षड्यंत्र रचा गया. मीडिया और जनता में ये संदेश देने के लिए कि सरकार किसान नेताओं से बातचीत कर रही है, सरकार ने भारतीय किसान संघ को वार्ता के लिए बुला लिया, जबकि उनकी इस आंदोलन में कोई भागीदारी नहीं थी. यह आंदोलन पूरी तरह से अखिल भारतीय किसान सभा के नेतृत्व में संचालित हो रहा था. दरअसल, भारतीय किसान संघ, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का किसान संगठन है. स्पष्ट है कि भाजपा सरकार में आरएसएस से जुड़ा कोई संगठन सरकार के विरुद्ध सड़कों पर उतरेगा नहीं. लेकिन आमलोगों को ये संदेश देने के लिए कि सरकार ने आंदोलनरत किसानों से वार्ता की, इन्होंने आरएसएस के उस संगठन को बातचीत के लिए आमंत्रित किया, जिनतक इनकी सीधी पहुंच है और जो सरकार के विरोध में कुछ नहीं बोल सकते.

किसानों को उलझा दिया सरकारी योजनाओं के जाल में

पूरे राजस्थान की रफ्तार पर ब्रेक लगा देने वाले आंदोलन से जब सरकार की तंद्रा टूटी और सरकार ने किसानों को वार्ता के लिए बुलाया, तो लगा था कि कुछ ठोस परिणाम निकलकर सामने आएगा, लेकिन जो सामने आया वो पूरी तरह से नाकाफी है. जिन ग्यारह सूत्री मांगों को लेकर राज्यभर के किसान अपने घर से दूर लगातार तेरह दिनों तक सड़कों पर रहे, उन मांगों के एवज में सरकार ने उन्हें अपनी पुरानी योजनाओं का लेखा–जोखा सुना दिया है. जी हां, आधे से ज्यादा मांगों के जवाब में उन्हीं घिसी–पिटी योजनाओं का हवाला दिया गया है, जिनकी असफलता ने किसानों को सड़कों पर आने को मजबूर किया. सम्पूर्ण कर्जमाफी को आधे–अधूरे पर समेट दिया गया है, उसमें भी एक लम्बी प्रक्रिया का झोल है. किसानों की मांग थी कि उनके ऊपर जितना भी कर्ज है, उसे माफ किया जाय. लेकिन सरकार ने इस मांग को आधा–अधूरा पूरा किया है. सरकार 50,000 रुपए तक की कर्जमाफी को लेकर सहमत हुई है. उसमें भी ये कहा गया है कि इस कर्जमाफी को लेकर एक कमिटी बनाई जाएगी. वो कमिटी अन्य राज्यों में हुई कर्जमाफी का अध्ययन करके एक महीने में रिपोर्ट देगी और इसके अनुसार सरकार कर्जमाफी को लेकर कदम उठाएगी. स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशें लागू करने के मामले में भी टाल–मटोल ही दिखता है. सरकार की तरफ से कहा गया है कि स्वामीनाथन आयोग की 80 फीसदी से अधिक सिफारिशें लागू की जा चुकी हैं. राज्य में पहले से चल रही कृषि विकास की तमाम योजनाएं स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशों के अनुसार ही हैं. इसे पूर्णतः लागू करने को लेकर केंद्र सरकार को लिखा जाएगा. पशु बिक्री पर लगी रोक को हटाने वाली मांग में भी ऐसी ही लापाधोती हुई है. नए कानून के अनुसार, 3 साल से कम उम्र के बछड़ों की खरीद–फरोख्त पर पाबंदी लगा दी गई थी. किसानों की मांग थी कि इस पाबंदी को हटाया जाय, क्योंकि इस नियम के बाद मजबूर किसान भी अपने पशु नहीं बेच पा रहे थे. सरकार ने इस मामले में पूरी राहत देने की जगह 3 साल को घटाकर 2 साल कर

(शेष पृष्ठ 2 पर)

न्यू इंडिया में किसानों की क़ब्रगाह के लिए जगह रखिएगा!

भारत में बदलाव के नारे शाइनिंग इंडिया से होते हुए न्यू इंडिया तक पहुंच गए, लेकिन अन्नदाता किसान आज भी मौत को गले लगाने पर मजबूर है. राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़े बताते हैं कि किसान आत्महत्याओं में 42 फीसदी की बढ़ोतरी हुई है. 30 दिसंबर 2016 को जारी एनसीआरबी की रिपोर्ट 'एक्सिडेंटल डेथ्स एंड सुसाइड इन इंडिया 2015' के मुताबिक साल 2014 में 12,360 किसानों और खेती से जुड़े मजदूरों ने खुदकुशी कर ली. ये संख्या 2015 में बढ़ कर 12,602 हो गई. इन मौतों में करीब 87.5 फीसदी केवल सात राज्यों में ही हुई हैं. साल 2015 में सबसे ज्यादा महाराष्ट्र के किसानों ने मौत को गले लगाया, ये संख्या 4,291 थी. किसानों की आत्महत्या के मामले में महाराष्ट्र के बाद कर्नाटक का नंबर आता है. कर्नाटक में इस साल 1,569 किसानों ने आत्महत्या की. वहीं तेलंगाना में 1400, मध्य प्रदेश में 1290, छत्तीसगढ़ में 954, आंध्र प्रदेश में 916 और तमिलनाडु में 606 किसानों ने 2015 में आत्महत्या की. अन्य राज्यों की बात करें, तो इसी साल राजस्थान विधानसभा के बजट सत्र में एक प्रश्न के जवाब में वहां के गृहमंत्री ने एक चौंकाने वाला आंकड़ा पेश किया. उन्होंने बताया कि प्रदेश में 2008 से 2015 के दौरान आठ साल में 2870 किसान खुदकुशी कर चुके हैं. इससे भी बुरा हाल छत्तीसगढ़ का है. छत्तीसगढ़ के राजस्व मंत्री ने इसी साल मार्च में विधानसभा में बताया था कि राज्य में जनवरी 2013 से 31 जनवरी 2016 तक 309 किसानों ने आत्महत्या की है. हालांकि छत्तीसगढ़ सरकार के इस आंकड़े पर भी सवाल खड़ा हो गए, क्योंकि एनसीआरबी के आंकड़ों के अनुसार छत्तीसगढ़ में केवल 2015 में 854 किसानों ने आत्महत्या की है. पंजाब की बात करें, तो नई सरकार आने के बाद शुरू के तीन महीनों में ही 125 से किसान अपनी जान दे चुके हैं. ये रिपोर्ट भी गौर करने वाली है कि 1991 से 2011 के बीच लगभग 2000 किसानों ने रोज खेती छोड़ी. ■

जीतती सरकार, हारते किसान

पृष्ठ 1 का शेष

दिया, यानि अब 2 साल से बड़े बछड़े बेचे जा सकेंगे. सहकारी समितियों के कर्जों में कटौती बंद करने और किसानों को फसली ऋण देने की मांग पर तो पूरी तरह से पुरानी योजनाओं का मुलम्मा चढ़ा दिया गया है. किसानों के साथ बैठक में मौजूद सहकारी मंत्री ने बताया कि मौजूदा सरकार के कार्यकाल में 57 हजार करोड़ के ब्याज मुक्त ऋण वितरित किए गए हैं. मंत्री जी ने पिछली कांग्रेस सरकार के द्वारा वितरित किए गए ऋण से इसकी तुलना की और कहा कि पिछली सरकार ने केवल 27.87 हजार करोड़ के ऋण ही वितरित किए थे. लेकिन इस ब्याज मुक्त ऋण को सभी किसानों तक पहुंचाने की मांग को लेकर मंत्री जी ने कुछ नहीं कहा. 60 वर्ष से अधिक उम्र के किसानों के लिए पेंशन की मांग को सरकार ने आम लोगों के पेंशन से जोड़ दिया. सरकार की तरफ से कहा गया कि वर्तमान में सामाजिक सुरक्षा योजना के तहत सभी पात्र व्यक्तियों को वृद्धावस्था पेंशन दिया जाता है. हालांकि जब किसानों ने कहा कि 5000 न हो सके तो, 2000 रुपए प्रति माह के पेंशन पर विचार किया जाना चाहिए, तो सरकार की तरफ से कहा गया कि इस पूर्ववर्ती योजना में ही संशोधन पर विचार किया जाएगा. बेरोजगारी के सवाल पर भी सकारात्मक रुख दिखाने की जगह सरकार ने इसे पूर्व की योजना से जोड़ दिया. सरकार की तरफ से कहा गया कि मनरेगा योजना के तहत पहले ही सौ दिनों का रोजगार दिया जा रहा है. सीकर के वाहनों को जिले में टोलमुक्त करने की मांग को सरकार टाल गई और कहा कि इसपर विचार किया जाएगा. सीकर को नहरों से जोड़े जाने की मांग का भी कोई स्पष्ट आश्वासन नहीं मिला. सरकार की तरफ से कहा गया कि इसे लेकर पंजाब सरकार के साथ एमओयू की जा रही है. किसानों के लिए मुफ्त बिजली की मांग के एवज में भी पुरानी योजना का हवाला दिया गया. सरकार की तरफ से कहा गया कि मीटर वाले कृषि उपभोक्ताओं को पहले से ही 90 पैसे प्रति यूनिट की दर पर बिजली दी जा रही है. दलितों, अल्पख्यकों और महिलाओं पर हो रहे अत्याचारों के सवाल पर बस ये कहा गया कि कार्रवाई हो रही है. किसानों ने ये मांग भी की थी कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के छात्रों की रुकी हुई छात्रवृत्ति जल्द से जल्द दी जाय, इस पर सरकार की तरफ से बस इतना कहा गया कि छात्रवृत्ति के सम्बन्ध में प्रशासनिक स्वीकृति जारी की जा चुकी है.

ऐसा पहली बार नहीं हुआ कि सरकार की तरफ से किसी किसान आंदोलन की धार कुंद करने की कोशिश की गई हो. पिछले 2-3 सालों में जितने भी किसान आंदोलन हुए, सभी को येन-केन प्रकारेण असफल कर दिया गया. कुछ आंदोलनों का उद्देश्य तो हिंसा में दफन हो गया. हाल के दिनों में ऐसे दो आंदोलन प्रमुख रहे. एक महाराष्ट्र का आंदोलन और दूसरा मध्यप्रदेश के मंदसौर का किसान आंदोलन.

महाराष्ट्र आंदोलन: फाइलों में दफ़न हो गए वादे

महाराष्टछके किसान आन्दोलन ने भी सरकार को घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया था. कर्जमाफी और स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशें लागू कराने संबंधी अन्य मांगों को लेकर अहमदनगर के दिल पुणतांवा गांव से किसान हड़ताल की शुरुआत हुई थी, जिसने देखते-देखते आंदोलन का शक्ल अख्तियार कर लिया. इस आन्दोलन ने पूरे महाराष्ट्र को अपनी जद में ले लिया था. विरोध स्वरूप सड़कों पर अन्न-फल बिखेर कर और दूध बहाकर प्रदर्शन कर रहे किसानों ने देश ही नहीं, विदेशों में भी सुर्खियां बटोरी थी. इस आन्दोलन की शुरुआत में भी सरकार सोती रही, लेकिन जब आन्दोलन ने व्यापक रूप धारण कर लिया और इससे आम जनजीवन प्रभावित होने लगा, तब सरकार ने किसानों को वार्ता के लिए आमंत्रित किया. 11 जून को मुंबई में किसानों की सुकानु समिति और राज्य सरकार द्वारा बनाई गई मंत्रियों की कमिटी के बीच बैठक हुई. उसमें सरकार की तरफ से किसानों को कर्जमाफी का आश्वासन दिया गया. इस आश्वासन के बाद किसानों ने आंदोलन खत्म करने का फैसला लिया. लेकिन जब कर्जमाफी की घोषणा की बात आई, तो पता चला कि इसे भी शर्त के साथ लागू किया जा रहा है. शर्त ये थी कि जिन किसानों के पास 5 एकड़ से कम जमीन है, उनका ही कर्ज माफ किया जाएगा. हालांकि सरकार ने ये भी कहा कि जिन किसानों के पास 5 एकड़ से ज्यादा जमीन है और वे जरूरतमंद हैं, उनकी कर्जमाफी पर विचार के लिए एक कमिटी बनाई जाएगी और उसकी रिपोर्ट के बाद इन किसानों की कर्जमाफी भी होगी. स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशें लागू करने को लेकर ये फैसला हुआ कि मुख्यमंत्री देवेंद्र फडनवीस की अध्यक्षता में एक कमेटी बनेगी, जिसमें किसानों के प्रतिनिधि भी होंगे. ये कमिटी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से मिलकर आगे की दिशा तय करेगी. दूध के दाम बढ़ाने और किसानों को मुनाफा देने की मांग पर ये फैसला हुआ था कि जिस तरह शक्कर के लिए किसानों और सरकार के बीच 70:30 का हिसाब होता है, वैसे ही दूध का भी होगा. ये भी कहा गया था कि सरकार 20 जुलाई तक दूध के लिए पॉलिसी लाने जा रही है.

सरकार के ये सभी वादे हवाई निकले और अपनी मांगों को लेकर किसानों को फिर से सड़कों पर आना पड़ा. कर्जमाफी के एलान के 2 महीने बाद भी जब सरकार की तरफ से इसे लेकर कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया, तो किसानों ने फिर आंदोलन शुरू किया. लेकिन किसानों के इस आंदोलन को स्वतंत्रता दिवस की आड़ में बलपूर्वक कुचल दिया गया. कर्ज माफी के पैकेज को लागू नहीं किए जाने के विरोध में अहमदनगर, नासिक व परभणी के प्रदर्शन कर रहे सैकड़ों किसानों पर पुलिस ने लाठीचार्ज कर दिया, क्योंकि उस दिन 15 अगस्त था. अखिल भारतीय किसान सभा के बैनर तले हो रहे इस आंदोलन के दौरान अहमदनगर में इकट्ठा हुए सैकड़ों किसान मंत्री राम शिंदे से मुलाकात कर अपनी मांगों के समर्थन में एक ज्ञापन सौंपना चाहते थे. लेकिन पुलिस ने उनपर बेरहमी से डंडे बरसाए. ये कितना हास्यास्पद है कि एक तरफ लाल किले की प्राचीर से देश के प्रधानमंत्री किसानों के लिए किए गए अपने कार्यों पर कसीदे पढ़ रहे थे और दूसरी तरफ अपने हक की आवाज बुलंद कर रहे किसानों पर पुलिस लाठियां बरसा रही थी.

मंदसौर आंदोलन: हिंसा की आग में जली किसानों की मांग

मध्यप्रदेश के मंदसौर में किसानों के आंदोलन की परिणति तो और भी दुखद रही. जो किसान अपने हक के लिए सड़कों पर उतरे, उन्हें पुलिस की गोली खानी पड़ी. 6 जून को हजारों किसानों का हुजूम मंदसौर और पिपलियामंडी के बीच बही पार्श्वनाथ फोरलेन पर इकट्ठा हो गया. इन किसानों ने चक्का जाम करने की कोशिश की. पुलिस की तरफ से जब किसानों पर सख्ती दिखाई गई, तो किसानों ने विरोध दर्ज कराया. मुट्ठी भर पुलिस किसानों के बीच घिर गई. किसानों का आरोप था कि सीआरपीएफ और पुलिस ने बिना वॉर्निंग दिए फायरिंग शुरू कर दी. इस फायरिंग में 6 लोग मारे गए. इसके बाद तो पूरा मंदसौर, नीमच, रतलाम सहित कई जिले हिंसा की आग में जलने लगे. जिन मांगों को लेकर किसान सड़कों पर उतरे थे और आंदोलन कर रहे थे, वे सभी मांग हिंसा की भेंट चढ़ गए. इसके बाद शुरू हुआ सियासी ड्रामा. सरकार ने मंदसौर के डीएम-एसपी का तबादला किया. नीमच और रतलाम के भी कलेक्टर बदले गए. गौर करने वाली बात ये रही कि सरकार पहले पुलिस फायरिंग में किसानों की मौत से इनकार करती रही. लेकिन गोलीकांड के तीसरे दिन सरकार ने यू-टर्न लिया और 8 जून को गृहमंत्री भूपेन्द्र सिंह ने पुलिस फायरिंग में 5 किसानों के मौत की बात मान ली. मुख्यमंत्री आंसू बहाते हुए मीडिया के सामने प्रकट हुए और मध्य प्रदेश में शांति बहाली के लिए अनिश्चितकालीन उपवास का एलान किया. हालांकि 9 जून को शुरू हुआ शिवराज सिंह चौहान का उपवास 10 जून को ही ख़त्म हो गया. कांग्रेस ने इसे दिखावा करार दिया और इसके बदले में 14 जून से 72 घंटे के सत्याग्रह का एलान किया. लेकिन इस पूरी सियासी नौटंकी के बीच किसानों की मांगों वाला मुख्य मुद्दा भी सरकारी गोली खाए किसानों के साथ ही दफ़न हो गया.

क्या हैं किसानों की असल समस्याएं

बहरहाल, किसान आंदोलन के लगातार असफल होने के पीछे कई कारण हैं. जाहिर है, कोई सरकार अपने खिलाफ आन्दोलन नहीं चाहती, लेकिन किसानों की कुछ ऐसी मूलभूत समस्याएं भी हैं, जिसे आमतौर पर किसान अपने आन्दोलन में नहीं उठाते. कृषि मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार, 1951 के बाद से प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धता में 70 फीसदी की गिरावट हुई है. ये आंकड़े वर्ष 2011 में 0.5 हेक्टेयर से 0.15 हेक्टेयर तक आ गए. भविष्य में यह और घटेगा, यानि यह देश में छोटे और सीमांत भूमि-धारकों की संख्या का 85 फीसदी हैं. भारतीय कृषि राज्य पर 2015-16 की रिपोर्ट में यह तथ्य सामने आया है. एक बड़ी समस्या ये है कि भारत के 52 फीसदी खेत बारिश पर निर्भर हैं. उदारवादी अर्थव्यवस्था अपनाए हुए 25 साल से ज्यादा हो गए. 1991 में जब इसकी शुरुआत मनमोहन सिंह, वित्त मंत्री रहते हुए कर रहे थे, तब कहा गया था कि इससे देश में खुशहाली आएगी. आज हाल ये है कि 1995 से 2014 के बीच देश में आधिकारिक तौर पर तीन लाख से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं. आखिर, किसान को लेकर सरकार की नीति और नीयत क्या है? इसे समझने के लिए एक और आंकड़े पर ध्यान दीजिए. 1947 के बाद, जीडीपी में कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी 53.1 फ़ीसद थी. 60 वर्षों बाद यह घटकर 13 फ़ीसद रह गई. गौरतलब है कि सरकारी योजना के हिसाब से इसे और कम करने की कोशिश की जा रही है. सर्विस सेक्टर का हिस्सा बढ़ रहा है. ऐसे में, सरकार की कोशिश है कि 2020 तक जीडीपी में कृषि योगदान कम करके 6 प्रतिशत किया जाए. ऐसे में, किसान आंदोलन अगर कर्ज माफी तक ही अपनी मांग को सीमित रखता है, तो यकीन मानिए, आने वाले समय में भी किसानों को ऐसे ही आंदोलन करते रहना होगा, सरकारी वादों के समक्ष झुकते रहना होगा. कुल मिला कर, इस देश में सरकारें आती-जाती रहेंगी. राजनीतिक दल चुनाव हारते-जीतते रहेंगे, लेकिन किसान हमेशा हारने को अभिशप्त रहेंगे. ■

feedback@chauthiduniya.com

क्या हैं स्वामीनाथन आयोग की सिफ़ारिशें

- सीलिंग सरप्लस और बंजर भूमि का वितरण.
- मुख्य कृषि भूमि और जंगल कॉरपोरेट क्षेत्र को ग़ैर कृषि प्रयोजनों के लिए देने पर रोक.
- आदिवासियों और चरवाहों को जंगल में चराई का अधिकार.
- एक राष्ट्रीय भूमि उपयोग सलाहकार सेवा की स्थापना.
- कृषि भूमि की बिक्री विनियमित करने के लिए एक तंत्र की स्थापना
- सस्ता स्वास्थ्य बीमा प्रदान करें, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों को पुनर्जीवित करें.
- माइक्रोफाइनांस नीतियों का पुनर्गठन, जो आजीविका वित्त के तौर पर काम करें.
- सस्ती क़ीमत, सही समय-स्थान पर गुणवत्ता युक्त बीजों और अन्य सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित करें.
- कम जोखिम और कम लागत वाली प्रौद्योगिकी, जो किसानों को अधिकतम आय प्रदान करने में मदद कर सके.
- जीवन रक्षक फसलों के मामले में बाज़ार हस्तक्षेप योजना की आवश्यकता.
- अंतरराष्ट्रीय मूल्य से किसानों की रक्षा के लिए आयात शुल्क पर तेजी से कार्रवाई की आवश्यकता.
- न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के कार्यान्वयन में सुधार. धान और गेहूं के अलावा अन्य फसलों के लिए भी न्यूनतम समर्थन मूल्य की व्यवस्था की जानी चाहिए.
- न्यूनतम समर्थन मूल्य उत्पादन की औसत लागत की तुलना में कम से कम 50 फ़ीसद अधिक होना चाहिए.
- ऐसे बदलाव की ज़रूरत है, जो घरेलू एवं अंतरराष्ट्रीय बाज़ार के लिए स्थानीय उत्पाद की ग्रेडिंग, ब्रांडिंग, पैकेजिंग और विकास को बढ़ावा दे.

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

वर्ष 09 अंक 30
25 सितंबर- 01 अक्टूबर 2017

RNI-DELHIN/2009/30467

संपादक
संतोष भारतीय

एडिटर (इंवेस्टिगेशन)
प्रभात रंजन दीन

सहायक संपादक
सरोज कुमार सिंह (बिहार-झारखंड)
सरयू भवन, वेस्ट बोरिंग केनाल रोड,
हरीलाल स्वीट्स के निकट, पटना-800001
फोन: 0612 3211869, 09431421901

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63 नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा, गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.
संपादकीय 0120-6451999
6450888
विज्ञापन व प्रसार 022-65500786
+91-8451050786
+91-9266627379
फैक्स न. 0120-2544378

पृष्ठ-16++ (बिहार-झारखंड, उत्तर प्रदेश-उत्तराखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुन: प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

भारत पत्रकारों के लिए सबसे ख़तरनाक देश बनता जा रहा है

शफ़ीक आलम

गौरी लंकेश की हत्या ने देश में पत्रकारों की सुरक्षा और प्रेस की आज़ादी की बहस को एक बार फिर से ज़िंदा कर दिया है. ये हत्या अपनी तरह की कोई अनोखी वारदात नहीं है. देश में इससे पहले भी दर्जनों पत्रकार इस पेशे को अपनाने की कीमत अपनी जान देकर अदा कर चुके हैं. उत्तर प्रदेश के शाहजहांपुर में वर्ष 2015 में पत्रकार जोगेन्द्र सिंह को सरेआम जिंदा जला दिया गया. उसकी हत्या का आरोप उत्तर प्रदेश सरकार के एक तत्कालीन मंत्री पर लगा था. उसी तरह पिछले साल उत्तर प्रदेश, बिहार और झारखंड में कुछ ही दिनों के अन्तराल पर तीन पत्रकारों की हत्या कर दी गई थी, जिसमें बिहार के सीवान में दैनिक हिन्दुस्तान के ब्यूरो चीफ राजदेव रंजन, झारखंड के चतरा में एक स्थानीय न्यूज चैनल के पत्रकार अखिलेश प्रताप सिंह और उत्तर प्रदेश के सुल्तानपुर के एक स्थानीय पत्रकार करुण मिश्रा के नाम शामिल थे. राजदेव रंजन की हत्या का आरोप सीवान के पूर्व सांसद मो. शहाबुद्दीन पर लगा, जबकि शेष दो पत्रकारों की हत्या में भी स्थानीय माफिया और राजनेताओं के गठजोड़ की बात सामने आई थी. ज़ाहिर है यह सूची यहीं खत्म नहीं होती. इन घटनाओं से पहले और बाद में भी पत्रकारों की हत्या का सिलसिला जारी रहा. गौरी लंकेश की हत्या के कुछ दिनों बाद ही बिहार के अरवल जिले में एक पत्रकार पंकज मिश्र पर जानलेवा हमला हुआ. इन हत्याओं, पत्रकारों पर होने वाले हमलों और उनको मिलने वाली धमकियों से यह ज़ाहिर होता है कि देश में पत्रकार न केवल असुरक्षित हैं, बल्कि अभिव्यक्ति की आज़ादी को भी चोट पहुंचाने की लगातार कोशिशें हो रही हैं. इसके लिए कोई एक सरकार या कोई एक विचारधारा ज़िम्मेदार नहीं है, बल्कि हर रंग और विचारधारा के लोग अभिव्यक्ति की आज़ादी का गला घोंटने की साजिश में शामिल हैं.

भारत में अभिव्यक्ति की आज़ादी को कुचलने की कोशिश हर स्तर पर हो रही है. जहां एक तरफ मुख्यधारा का मीडिया ख़बरों को लोगों तक पहुंचाने के बजाय उसे दबाने की कोशिश कर रहा है. जो काम देश की मुख्यधारा के मीडिया को करना चाहिए, वो काम सोशल मीडिया कर रहा है. सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स ऐसी ख़बरों को लोगों तक पहुंचा रहे हैं, जिन्हें ताक़तवर और सत्ताधीश दबाना चाहते हैं. लेकिन सोशल मीडिया ने फेक न्यूज़ के बाज़ार को भी गर्म कर रखा है. इनकी देखादेखी मुख्यधारा के समाचार माध्यम भी फेक न्यूज़ के कारोबार में संलिप्त हो गए हैं. चौथी दुनिया ने अपने पिछले अंकों में फेक न्यूज़ के बाज़ार पर कई रिपोर्टें प्रकाशित की हैं. बहरहाल, सोशल मीडिया पर भी अभिव्यक्ति की आज़ादी को कुचलने के लिए कई तरह के ट्रोलर्स छुटे सांड की तरह घूम रहे हैं. दरअसल ट्रोलिंग भी रोज़गार बन गया है. यहां न केवल अपशब्द कहे जाते हैं, बल्कि गालियां और जान से मारने की धमकी भी दी जाती है. गौरी लंकेश की हत्या के बाद भी कई तरह के ट्रोलर्स सक्रिय हुए. एक ने तो उन्हें कुतिया तक कह दिया और जो उनके लिए हमदर्दी के बयान दे रहे थे, उन्हें पिल्लों का ख़िताब मिला. बहरहाल थोड़ा पीछे मुड़ कर देखें तो सरकारी स्तर पर भी प्रेस की आवाज़ को दबाने की ख़बरें मिल जाती हैं. जुलाई 2015 में छत्तीसगढ़ में चार पत्रकारों संतोष यादव, समारू नाग, प्रभात सिंह और दीपक जायसवाल को गिरफ्तार किया गया. ख़बरों के मुताबिक उन्हें गिरफ्तार कर पुलिस ने यातनाएं भी दी थीं. उस समय प्रेस काउंसिल ऑफ़ इंडिया के तत्कालीन चेयरमैन जस्टिस चंद्रमौली कुमार प्रसाद को हस्तक्षेप करते हुए प्रभात सिंह की गिरफ्तारी पर राज्य सरकार से रिपोर्ट मांगनी पड़ी थी. दरअसल छत्तीसगढ़ में पत्रकार दोहरी मार के शिकार हैं, जहां सरकार और पुलिस के खिलाफ रिपोर्टिंग करने पर उन्हें पुलिस और प्रशासन द्वारा फर्जी मामलों में फंसा कर गिरफ्तार कर लिया जाता है. वहीं पत्रकारों को स्थानीय गुंडों और नेताओं का भी शिकार होना पड़ता है.

बहरहाल, गौरी लंकेश की हत्या चाहे जिन कारणों से हुई हो, लेकिन एक बात तो तय है कि इस हत्या ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत में प्रेस की आज़ादी और पत्रकारों की दयनीय स्थिति की पोल खोल कर रख दी है. पिछले कुछ वर्षों से भारत में हो रहे पत्रकारों पर जानलेवा हमलों का सिलसिला वर्ष 2017 में भी जारी रहा. इन घटनाओं ने भारत को पत्रकारों की सुरक्षा की दृष्टि से दुनिया के सबसे खतरनाक देशों की श्रेणी में खड़ा कर दिया है. इस की पुष्टि आईपीआई और रिपोर्टर्स विदआउट बॉर्डर्स की समय-समय पर प्रकाशित रिपोर्टों और भारत में राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) द्वारा जारी रिपोर्टों से भी हो जाती है. एनसीआरबी की रिपोर्ट के मुताबिक, वर्ष 2014-15 के दौरान भारत में पत्रकारों पर कुल 142 हमले हुए जिनकी शिकायत दर्ज कराई गई. इस वर्ष जुलाई में मानसून सत्र के दौरान राज्यसभा में एक सवाल के जवाब में गृह राज्य मंत्री हंसराज अहीर ने एनसीआरबी के आंकड़ों का हवाला देते हुए बताया था कि पत्रकारों पर हुए 142 हमलों के मामले में 73 लोगों को गिरफ्तार किया गया है. एनसीआरबी की रिपोर्ट के मुताबिक इन 142 मामलों में 2014 और 28 मामले 2015 में दर्ज किए गए. इस मामले में उत्तर प्रदेश (64 वारदातों के साथ) पहले स्थान पर रहा, जबकि मध्य प्रदेश (26) और बिहार(22) दूसरे और तीसरे स्थान पर रहे हैं. पत्रकारों पर हुए 79 प्रतिशत हमले केवल इन तीन राज्यों में हुए. कमिटी टू प्रोटेक्ट जर्नलिस्ट्स के आंकड़ों के मुताबिक वर्ष 1992 और 2016 के बीच भारत में कुल 70 पत्रकार मारे गए हैं. उनमें से 40 की हत्या के उद्देश्यों का पता चल चुका है, शेष मामले अभी अदालतों में चल रहे हैं. रिपोर्टर्स विदआउट बॉर्डर्स (आरडब्लूबी) द्वारा जारी वर्ल्ड प्रेस फ्रीडम इंडेक्स में भारत 180 देशों की सूची में 136 वें स्थान पर है. पिछले वर्ष की तुलना में भारत की रैंकिंग में 3 अंक की गिरावट दर्ज की गई है. रिपोर्टर्स विदाउट बॉर्डर्स की 2015 की रिपोर्ट के मुताबिक भारत पत्रकारों के लिए दुनिया के सबसे खतरनाक देशों की सूची में तीसरे स्थान पर था.

पहले पत्रकारों की हत्याओं के मामले में यह कहा जाता था कि छोटे शहरों के पत्रकार अपराधियों के आसान शिकार होते हैं. छोटे शहरों के पत्रकार अधिक असुरक्षित होते हैं. उनकी रिपोर्टिंग अधिकतर स्थानीय भ्रष्टाचार, ग्राम पंचायत के फैसलों, जन सुनवाई में अधिकारी की अनुपस्थिति, ग्राम सभा की गतिविधियों, सड़कों की बदहाली, बिजली की समस्या, स्थानीय अधिकारियों, विधायकों के कारनामों और स्थानीय आपराधिक मामलों आदि पर केंद्रित रहती है. लेकिन यदि बंगलुरू जैसे शहर में एक प्रतिष्ठित पत्रकार की यूं हत्या हो जाए तो उसे क्या कहा जाए? यह स्थिति अधिक चिंताजनक इसलिए हो जाती है कि उनकी हत्या को सोशल मीडिया पर कुछ लोगों ने उचित ठहराना शुरू कर दिया. यह न सिर्फ कानून व्यवस्था पर एक सवालिया निशान है, बल्कि इससे यह सवाल भी पैदा होता है कि एक समाज के तौर पर हम किस दिशा में जा रहे हैं? ■

गौरी लंकेश की हत्या चाहे जिन कारणों से हुई हो, लेकिन एक बात तो तय है कि इस हत्या ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत में प्रेस की आज़ादी और पत्रकारों की दयनीय स्थिति की पोल खोल कर रख दी है. पिछले कुछ वर्षों से भारत में हो रहे पत्रकारों पर जानलेवा हमलों का सिलसिला वर्ष 2017 में भी जारी रहा. इन घटनाओं ने भारत को पत्रकारों की सुरक्षा की दृष्टि से दुनिया के सबसे खतरनाक देशों की श्रेणी में खड़ा कर दिया है.

feedback@chauthiduniya.com

एक फ़ीसदी जनता के लिए ही देश चमक रहा है

शशि शेखर

देश में आर्थिक विषमता की स्थिति क्या है, इसे हम सब जानते हैं, लेकिन इस पर देश के भीतर कोई खास स्टडी नहीं होती. हाल में एक फ्रेंच अर्थशास्त्री थॉमस पिकेटी ने अपनी स्टडी में बताया है कि कैसे साल 1980 से 2014 के बीच, भारत की टॉप 1 फीसदी जनसंख्या और बाकी की कुल आबादी की आय में वृद्धि के बीच सबसे अधिक अंतर रहा. गरीब और अमीर के बीच यह बढ़ती आय असमानता दरअसल अमीर और गरीबों पर सरकारी नीतियों के अलग-अलग प्रभाव को दर्शाती है. 1980 और 2014 के बीच इस तरह की आय में असमानता चीन, अमेरिका और फ्रांस में भी देखी जा रही है, लेकिन भारत में यह अंतर बहुत अधिक है. 1930 में देश की कुल आय का 21 फीसदी शीर्ष कमाई वाले 1 फीसदी लोगों के पास था, जो 1980 की शुरुआत में 6 फीसदी तक गिरा, जो आज बढ़कर 22 फीसदी तक पहुंच गया है. यानी, देश की 22 फीसदी कमाई देश के 1 फीसदी लोगों के पास है. ये डेटा राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय, राष्ट्रीय लेखा आंकड़ों, कर आंकड़ों और भारतीय मानव विकास सर्वेक्षण से ली गई है. 1951 से 1980 के बीच, देश की कुल आय का 28 फीसदी नीचे की 50 फीसदी आबादी के पास था. लेकिन, 1980 से 2014 के बीच यह उल्टा हो गया. टॉप 1 फीसदी के पास 29 फीसदी कमाई आ गई और 40 फीसदी मिडल क्लास के पास 23 फीसदी कमाई आ गई. बढ़ती हुई असमानता का मतलब यह है कि अमीर और गरीब के बीच का अंतर बहुत अधिक हो गया. उदारीकरण के बाद उच्च विकास दर ने भारत में गरीबी को कम किया, लेकिन अमीरी-गरीबी की खाई को और बढ़ा दिया.

सवाल है कि क्या भारत में आर्थिक सुधारों ने असमानता को बढ़ावा दिया है? थॉमस पिकेटी की यह स्टडी तो कम से कम यही बताती है. थॉमस पिकेटी का कहना है कि 1991 से 2012 तक आय बढ़ोतरी में काफ़ी बढ़ोतरी हुई है, लेकिन 10 फ़ीसदी यानी 8 करोड़ जनता के लिए भारत वास्तव में विकास कर रहा है. इन्हीं लोगों के लिए इंडिया शाइन कर रहा है. कुछ ही समय पहले संयुक्त राष्ट्र ने एक रिपोर्ट दी. इसमें बताया गया है कि भारत की सिर्फ एक फीसदी आबादी के पास पूरे भारत की 53 फीसदी संपत्ति है. इस रिपोर्ट में भारतीयों में आर्थिक दृष्टि से मौजूद इस असमानता को दूर करने के लिए सुझाव के तौर पर एक दूसरे तरह के आर्थिक मॉडल की जरूरत को बताया गया है. रिपोर्ट 'द वेटर विजनेस बेटर वर्ल्ड' में कहा गया है कि आर्थिक विषमता में भारत रूस के बाद दूसरे स्थान पर है, जहां सिर्फ एक फीसदी लोगों के पास देश की 53 फीसदी संपत्ति है. 1991 में जब उदारीकरण लाया जा रहा था, तब ये कहा गया था कि आर्थिक सुधार से विकास दर में वृद्धि होगी. कहा गया कि ऊपर के स्तर पर हो रहे विकास के प्रभाव से ग़रीबी को कम किया जा सकेगा. इसे ट्रिकल डाउन थ्योरी कहा गया. यानी, ऊपर का घड़ा जब भरेगा तो उसमें से रिसते हुए धन नीचे के लोगों तक भी पहुंचेगा. 26 साल बाद, आज क्या हुआ? ग़रीबी बरक़रार है. अमीर और अधिक अमीर हुए. आज विकास दर घटकर 5.7 फीसदी तक पहुंच गया है. कुछ समय पहले, कांग्रेस सरकार के समय ये कहा गया था कि जो भी व्यक्ति प्रतिदिन 32 रुपये से अधिक कमा रहा है, वह ग़रीब नहीं है.

अब ये किसी मजाक से कम नहीं तो और क्या है? क्या कोई आदमी 32 रुपये में रोजाना गुजारा कर सकता है. आज, एक तरफ किसान हैं तो दूसरी तरफ मज़दूर. दोनों परेशान हैं. कृषि क्षेत्र में निवेश होता नहीं दिख रहा है. आए दिन अलग-अलग राज्यों में किसान आन्दोलन कर रहे हैं. दरअसल, कांग्रेस और भाजपा, दोनों एक ही आर्थिक नीति के पैरोकार हैं. ये आर्थिक नीति ही इन आर्थिक विषमताओं को पैदा कर रही है. आज किसान जमीन बेचकर शहर की तरफ पलायन कर रहा है और वहां जाकर मजदूरी कर रहा है. सरकार किसानों की जमीन विकास के नाम पर निजी कंपनियों को दे रही है. ऐसे में जब सरकार समावेशी विकास की बात करती है, तब वह जनता के साथ मजाक ही लगता है. मौजूदा केन्द्र सरकार जापान से 88 हजार करोड़ रुपए कर्ज लेकर देश में बुलेट ट्रेन ला रही है. लेकिन, दूसरी तरफ पिछले तीन महीनों में महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और राजस्थान में किसानों ने जबरदस्त आन्दोलन किए. सरकार आज तक उन्हें स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशों के अनुसार एमएसपी यानी न्यूनतम समर्थन मूल्य नहीं दे सकी है. किसानों का आलू, प्याज 1 या 2 रुपए किलो खरीद कर कंपनियां उससे मुनाफा कमा रही है. लेकिन किसानों को कुछ नहीं मिल रहा है. क्या सरकार बुलेट ट्रेन की जगह इन किसानों की भलाई के लिए काम नहीं कर सकती? जाहिर है, जब तक सरकार की प्राथमिकता में बुलेट ट्रेन होगा, जब तक सरकार की आर्थिक नीति कॉरपोरेट के लिए होगी, तब तक ऐसी रिपोर्टें भी आती रहेंगी. वैसे इन रिपोर्टों का अंतिम परिणाम क्या होगा, इसका सिर्फ इंतजार किया जा सकता है. लेकिन, निश्चित तौर पर वो परिणाम भयावह ही होगा. ■

26 साल बाद, आज क्या हुआ? ग़रीबी बरक़रार है. अमीर और अधिक अमीर हुए. आज विकास दर घटकर 5.7 फीसदी तक पहुंच गया है. कुछ समय पहले, कांग्रेस सरकार के समय ये कहा गया था कि जो भी व्यक्ति प्रतिदिन 32 रुपये से अधिक कमा रहा है, वह ग़रीब नहीं है.

फरियाने के मूड में लालू और नीतीश

महागठबंधन सरकार के दौरान सृजन मामले में 10 से 29 जुलाई तक प्रशासन का चेक बाउंस होता रहा और नीतीश दिल्ली की दौड़ लगाते रहे. जब केंद्र से हमारे परिवार की कीमत पर गठबंधन तोड़ने का सौदा पट गया, तो सरकार बदल सृजन की जांच के लिए एसआईटी का गठन कर दिया. गठबंधन नहीं तोड़ते तो नीतीश कुमार को जेल जाना पड़ता. मुख्यमंत्री ने आरोपितों को बचने का मौका दिया. अपने पसंदीदा अधिकारी को आनन-फानन में जांच अधिकारी के रूप में भागलपुर भेज कर पूरी लीपापोती की कोशिश की.

सरोज सिंह

बिहार में इन दिनों भाषाई मर्यादा पर जमकर बहस हो रही है. हर दल के बड़े नेता और प्रवक्ता एक-दूसरे को लक्ष्मण रेखा नहीं लांघने की नसीहत दे रहे हैं. यह बहस तब और गरम हो गई, जब इसमें खुद नीतीश कुमार और लालू प्रसाद कूद पड़े. जानकार बता रहे हैं कि यह सब महागठबंधन टूटने का साइड इफेक्ट है. लेकिन क्या साइड इफेक्ट भाषाई स्तर पर इतना स्तरहीन हो सकता है, यह बड़ा सवाल चर्चा में है. आमतौर पर चुनाव के दिनों में सियासी फायदा उठाने के लिए कुछ नेता अपने विरोधियों के लिए ऐसी भाषा का प्रयोग कर बैठते हैं.

भाषायी मर्यादा भी भूले नेता

सवाल यह है कि सूबे बिहार में अभी न तो चुनाव है और न ही इसकी तैयारी शुरू हुई है, पर ऐसे धुआंधार बयान आ रहे हैं, जैसे कल ही वोट पड़ना हो. समाजशास्त्री संजय प्रसाद मानते हैं कि ऐसा इसलिए हो रहा है क्योंकि नेताओं के पास मुद्दों का अभाव है. अनाप-शनाप बोलकर जनता और मीडिया का ध्यान अपनी ओर खींचने की यह सारी कवायद है. राजनीतिक मामलों के जानकार रमेश तिवारी कहते हैं कि यह सब इसलिए बोला जा रहा है, ताकि मूल मुद्दों से जनता का ध्यान हटाया जा सके. पिंडदान होगा, वध होगा-आखिर यह कैसी राजनीतिक भाषा है. नीतीश कुमार ने लालू प्रसाद के भागलपुर की सभा को नुक्कड़ नाटक कहा तो लालू ने पलटवार करते हुए कहा कि अभी तो हल्का टैबलेट दिए हैं तब यह हाल है. नीतीश कुमार ने कहा कि हम मर्यादा नहीं तोड़ते और बिना मतलब की बहस में नहीं पड़ते. सृजन का मामला सीबीआई देख रही है और जिन्हें भरोसा नहीं वे कोर्ट जा सकते हैं. गलत काम कभी छिपता है क्या?

बोले लालू, अउरी भंडाफोड़ होखे वाला बा

नीतीश ने लालू की भागलपुर की सभा को आत्मघाती कदम बताया. इस पर पलटवार करते हुए लालू प्रसाद ने मुख्यमंत्री नीतीश कुमार से कहा- अउरी भंडाफोड़ होखे वाला बा, हमरा के पाठ मत पढ़ावअ. अभी हल्का टैबलेट दिए हैं, तो रिएक्शन होने लगा. पूरी दवाई बाकी है. हेडमास्टर की तरह हमको पाठ पढ़ा रहे हैं और मर्यादा की सीख दे रहे हैं. हम तो पॉलिटिकल साइंस के विद्यार्थी रहे हैं. वे घपला-घोटाला में इंजीनियरिंग किए हैं. हमारे साथ रहते सुशील मोदी को कागज उपलब्ध करवा कर हमारे ही परिवार के खिलाफ प्रेस कॉन्फ्रेंस करवाते रहे. उनकी आदत है कि उंगली दिखाकर बड़ी से बड़ी बातों को झुठलाना.

महागठबंधन सरकार के दौरान सृजन मामले में 10 से 29 जुलाई तक प्रशासन का चेक बाउंस होता रहा और नीतीश दिल्ली की दौड़ लगाते रहे. जब केंद्र से हमारे परिवार की कीमत पर गठबंधन तोड़ने का सौदा पट गया, तो सरकार बदल सृजन की जांच के लिए एसआईटी का गठन कर दिया. गठबंधन नहीं तोड़ते तो नीतीश कुमार को जेल जाना पड़ता. मुख्यमंत्री ने आरोपितों को बचने का मौका दिया. अपने पसंदीदा अधिकारी को आनन-फानन में जांच अधिकारी के रूप में भागलपुर भेज कर पूरी लीपापोती की कोशिश की.

विकास का मुद्दा एजेंडे से बाहर

इससे पहले जदयू के दो वरिष्ठ मंत्री ललन सिंह और विजेंद्र यादव ने भी लालू प्रसाद को अल्टीमेटम दिया था कि अगर भाषाई मर्यादाओं का ख्याल नहीं रखा गया तो फिर हम भी नहीं छोड़ेंगे. जदयू प्रवक्ता नीरज कुमार कहते हैं कि सत्ता जाने की खीज में लालू और उनका परिवार ओछी भाषा का प्रयोग कर रहा है. अब बर्दाश्त नहीं होगा और लालू प्रसाद को पछताना होगा. लालू और नीतीश खेमा रोजाना फरियाने के मूड में बयानों की बौछार कर रहा है, जिसमें दोनों तरफ से मर्यादाओं का ख्याल नहीं रखा जा रहा है. लेकिन इस पूरे प्रकरण में सबसे दुखद पहलू यह है कि सूबे में विकास का मुद्दा एजेंडे से बाहर चला गया और एक बार फिर भ्रष्टाचार का मुद्दा केंद्र में है. बेनामी संपत्ति पर लालू एंड फैमिली को घेरा जा रहा है और सृजन के नाम पर नीतीश कुमार और सुशील मोदी को घेरा जा रहा है. जदयू ने जब भाजपा के साथ सरकार बनाई तो एक आस जगी कि अब केंद्र में सहयोगी सरकार होने के कारण दशकों बाद विकास की गंगा सूबे में बहेगी. माहौल भी बनने लगा पर अचानक भ्रष्टाचार का मुद्दा इतना उछलने लगा कि विकास की बात कहीं हो ही नहीं रही है.

चारा और सृजन पर छिड़ी जंग

लालू खेमे को लग रहा है कि सृजन एक ऐसा मुद्दा है जो चारा के राजनीतिक कुप्रभाव को कम कर सकता है. विरोधी चारा की बात करेंगे तो सृजन को आगे कर दिया जाएगा मतलब हिसाब बराबर. नीतीश कुमार से कहीं ज्यादा लालू प्रसाद जल्दी में हैं. वह अपने नेताओं से कम अपने कार्यकर्ताओं से ज्यादा कनेक्ट हो रहे हैं. लालू प्रसाद समझ रहे हैं कि जिस तरह बेनामी संपत्ति के मामले में पूछताछ हो रही है तो किसी न किसी दिन बड़ी कार्रवाई भी हो सकती है. इसके अलावा सुप्रीम कोर्ट ने नौ महीने में चारा घोटाले के सभी मामलों को निपटाने की डेटलाइन दे रखी है. चार महीने निकल गए हैं. रांची में नियमित सुनवाई जारी है. अभी हर सप्ताह लालू प्रसाद को रांची जाना पड़ रहा है. इसलिए लालू प्रसाद अपनी मौजूदगी में एक ऐसी जमीन तैयार कर लेना चाहते हैं कि 2019 की जंग में बराबरी का मुकाबला हो. लालू का सामना मोदी लहर से होना है, अब उसमें नीतीश कुमार की ताकत भी जुड़ चुकी है, इसलिए उन्हें पता है कि जंग आसान नहीं है. कांग्रेस क्या करेगी, अभी कुछ तय नहीं है. यही कारण है कि लालू प्रसाद ताबड़तोड़ फैसले ले रहे हैं. वे जान रहे हैं कि उन्हें नीतीश कुमार से फरियाना है, इसलिए कील कांटा दुरुस्त करना जरूरी है. लालू कहते हैं कि केपी रमैया के निर्देश को अप्रैल, 2006 में पलटते हुए तब के डीएम ने सृजन प्रोजेक्ट को रोक कर राशि लौटाने का आदेश दिया था. फिर कैसे सरकार का पैसा सृजन के खाने में जाता रहा? ऐसा किसके आदेश से हुआ? सीएजी ने भी 2008 की रिपोर्ट में सृजन का खेल पकड़ लिया था. नीतीश बताएं, किसके आदेश से तब कार्रवाई नहीं की गई. नीतीश यह भी बताएं कि केपी रमैया को चुनाव लड़ने का टिकट क्यों दिया? हारने के बाद भी राज्य सरकार के बड़े पद पर बैठा दिया. कितनों को नीतीश चुप कराएंगे. हमारी सभा को आत्मघाती बता रहे हैं. हमें धमका रहे हैं. काफी बेचैन हैं. उन्होंने चेतावनी दी- नीतीश और मोदी जब तक जेल नहीं जाएंगे, दम नहीं लेंगे. कहा- हम सृजन घोटाले को लॉजिकल कनक्लूजन तक पहुंचाएंगे. नीतीश ने तेजस्वी को कहा था कि सारे मामले की जानकारी पब्लिक डोमेन में देनी चाहिए. हिम्मत है तो नीतीश भागलपुर में ही सभा कर सृजन के पूरे मामले से जनता को अवगत कराएं. दूसरी तरफ नीतीश कुमार की पार्टी जदयू भी अपने संगठन को धारदार बनाने में जुट गई है. चुनाव आयोग ने नीतीश कुमार को ही जदयू का असली मालिक बताया है, सो अब दुविधा की स्थिति खत्म है और जमीन पर पार्टी के कार्यक्रम को लागू किया जा रहा है. जदयू लालू प्रसाद की चुनौती को हल्के में नहीं ले रहा है और पूरी कोशिश है कि बूथ स्तर पर संगठन को धारदार बनाया जाए. ■

टूट के कगार पर सपा भरेगी जदयू की झोली

कांग्रेस विधायक दल में टूट की चर्चाओं के बाद अब सपा की बिहार इकाई में भी तोड़-फोड़ की चर्चा है. कांग्रेस की तरह यहां भले ही कोई विधायक न हो, पर पार्टी को शुरू से ही मजबूत करने में अहम भूमिका निभाने वाले कई बड़े पदाधिकारी और बड़ी संख्या में जमीनी कार्यकर्ताओं का मोह अब पार्टी से खत्म होता जा रहा है. खासकर शाहाबाद के कई बड़े नेताओं ने समाजवादी पार्टी छोड़ने का मन बना लिया है. सपा के मौजूदा प्रदेश अध्यक्ष देवेंद्र यादव के क्रियाकलापों से वे नेता खासे नाराज हैं. इन नेताओं ने अपनी यह समझ बनाई है कि देवेंद्र यादव पार्टी चलाने में सक्षम नहीं हैं और चाटुकारों से घिरे हैं. नाराज नेताओं का कहना है कि प्रदेश अध्यक्ष सही कार्यकर्ताओं और नेताओं को तवज्जो नहीं देते हैं और हां में हां मिलाने वाले नेताओं की बात सुनते हैं. इन नेताओं का कहना है कि बिहार में जो मौजूदा राजनीतिक परिदृश्य है, उसमें सपा लगभग अप्रासंगिक हो गई है, जबकि प्रदेश अध्यक्ष देवेंद्र यादव पार्टी में किसी भी टूट की संभावना से इनकार करते हैं. देवेंद्र यादव कहते हैं कि पूरी पार्टी एकजुट है और हम भाजपा भगाओ, देश बचाओ अभियान में जुटे हैं. टूट की बात ऐसे नेता कह रहे हैं जिन्होंने पार्टी की विधिवत सदस्यता भी नहीं ली है. पांच सात लोग पार्टी की इमेज को खराब कर रहे हैं. श्री यादव मानते हैं कि पूरे प्रदेश में सपा की लोकप्रियता लगातार बढ़ रही है, इसका उदाहरण हमारा सदस्यता अभियान है. जिन नेताओं ने सदस्यता अभियान में जरा भी योगदान नहीं दिया, आज वे बड़ी-बड़ी बातें कर रहे हैं. देवेंद्र यादव कहते हैं कि आगामी लोकसभा और विधानसभा चुनावों में सपा बिहार में एक मजबूत ताकत बनकर उभरेगी. लेकिन प्रदेश अध्यक्ष के इन दावों के विपरीत कृष्ण भगवान सिंह, डॉ. ओमप्रकाश सिंह, रितुराज सिंह, शशि पासवान और डॉ. संजय यादव जैसे कई नेताओं का कहना है कि सपा में अब पहले वाली बात नहीं है. डॉ. ओमप्रकाश सिंह का आरोप है कि सपा अब यहां एक व्यक्ति विशेष की पार्टी बनकर रह गई है. समाजवादी सोच का कोई असर पार्टी के कार्यक्रमों में नहीं दिखता है. ओमप्रकाश सिंह और रितुराज सिंह का कहना है कि हमारे साथ पार्टी के कई बड़े नेता जल्द ही जदयू में शामिल हो जाएंगे. बक्सर जिलाध्यक्ष कमलाकान्त सिंह का कहना है कि सपा की बिहार इकाई अपने मूल सिद्धांतों से भटक गई है. इन हालातों में पार्टी में एक पल भी बने रहना संभव नहीं है. मीडिया प्रभारी राजीव रंजन सिंह ने बताया कि जिला अध्यक्ष के नेतृत्व में समाजवादी युवजन सभा के जिलाध्यक्ष मिथिलेश राय, किसान प्रकोष्ठ के जिलाध्यक्ष सह ब्रह्मपुर प्रखंड सरपंच संघ के प्रखंड अध्यक्ष अखिलेश सिंह, मजदूर सभा के जिलाध्यक्ष जितेन्द्र राय ने अपना इस्तीफा प्रदेश सचिव डॉ. ओम प्रकाश सिंह एवं किसान प्रकोष्ठ के प्रदेश सचिव डॉ. संजय कुमार यादव को सौंप कर आगे की रणनीति तय करने की जिम्मेवारी उक्त दोनों नेताओं को सौंपी है.

गौरतलब है कि प्रदेश में सपा की कमान बारी-बारी से रामदेव यादव, पप्पू यादव, ददन पहलवान, देवनाथ यादव और रामचंद्र यादव संभाल चुके हैं. विधानसभा चुनाव के दौरान रामचंद्र यादव पार्टी प्रमुख थे. रामचंद्र के राजद में चले जाने के बाद पार्टी की कमान देवेंद्र यादव को सौंपी गई. उस समय मुलायम सिंह यादव ने देवेंद्र यादव पर भरोसा जताया था, लेकिन इसके बाद यूपी में जो समीकरण बने, उससे भी बिहार में सपा पर असर पड़ा. हालांकि देवेंद्र यादव कहते हैं कि हमलोग भाजपा भगाओ अभियान में जुटे हैं, बाकी चीजें गौण हैं. हमें जनता का भरपूर समर्थन मिल रहा है और आगे आने वाले दिनों में सपा मौजूदा सरकार के खिलाफ बड़ा आंदोलन छेड़ेगी.

पुलिस सुधार से क्यों डरती है सरकार

1997 में तत्कालीन केंद्रीय गृह मंत्री इंद्रजीत गुप्त ने सभी राज्यों को पुलिस व्यवस्था में सुधार के निर्देश दिए थे. पर उनकी सिफारिशों पर किसी राज्य ने अमल नहीं किया. इसके बाद महाराष्ट्र के पुलिस अधिकारी जेएफ रिबैरो की अध्यक्षता में एक समिति का गठन हुआ, जिसकी सिफारिशों को भी अनसुना कर दिया गया. पद्मनाभैया समिति की रिपोर्ट को भी किसी सरकार ने तवज्जो नहीं दी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

हमारा देश कई दशकों से आतंकी घटनाओं से जूझ रहा है. इसके बावजूद आतंकवाद से निपटने के लिए सरकार के पास किसी स्पष्ट नीति का नहीं होना आश्चर्य की बात है. पुलिस अधिनियमों में एकरूपता लाने के लिए भी अभी तक कोई प्रयास नहीं किया गया है. आदर्श स्थिति में एक लाख की आबादी पर 222 पुलिसकर्मी होने चाहिए, जबकि हमारे यहां केवल 182 पुलिसकर्मी हैं. वहीं जापान में पुलिसकर्मियों की संख्या 205, अमेरिका में 211 और इंग्लैंड में 257 है. देश में पुलिसकर्मियों के लिए आवासीय व्यवस्था भी लचर है. थाने में गाड़ियों की कमी है. संचार व्यवस्था भी अत्याधुनिक नहीं है. ब्यूरो ऑफ पुलिस रिसर्च एंड डेवलपमेंट के आंकड़ों के अनुसार, देश भर में 15,555 पुलिस स्टेशन हैं, जिसमें 8 प्रतिशत यानी 1211 पुलिस स्टेशन में कोई टेलीफोन सुविधा नहीं है. 260 पुलिस स्टेशन में परिवहन की कोई सुविधा नहीं है और 103 पुलिस स्टेशन में कोई वायरलेस सेट नहीं है. आश्चर्य की बात है कि इनमें से अधिकतर पुलिस स्टेशन ऐसे राज्यों में हैं, जहां उन्हें नक्सल और उग्रवादियों की समस्याओं से जूझना पड़ रहा है. नक्सलियों से निपटने के लिए उनके हाथों में अत्याधुनिक हथियार होने चाहिए, वहीं वे बुनियादी समस्याओं से जूझ रहे हैं. छत्तीसगढ़ में 161 पुलिस स्टेशन बिना किसी वाहन के ही चल रहे हैं. मध्यप्रदेश में 111 पुलिस स्टेशन में टेलीफोन सुविधा नहीं है, वहीं मणिपुर में 43 पुलिस स्टेशन में न तो वायरलेस सेट है और न ही टेलीफोन सुविधा. गुजरात जैसे विकसित राज्य में भी 630 पुलिस स्टेशन में इस साल तक कोई टेलीफोन सुविधा उपलब्ध नहीं है. आसाम में 137 पुलिस स्टेशन में टेलीफोन सुविधा नहीं है. झारखंड में 23 पुलिस स्टेशन में कोई वाहन नहीं है, 64 बिना टेलीफोन सुविधा के हैं और 11 पुलिस स्टेशन में न तो टेलीफोन सुविधा है और न ही वायरलेस सेट. त्रिपुरा, नागालैंड जैसे उग्रवाद प्रभावित राज्यों में भी पुलिस स्टेशन बदहाल हैं. पुलिस रिसर्च और डेवलपमेंट विभाग के एक वरिष्ठ अधिकारी बताते हैं कि इनमें से कुछ पुलिस स्टेशन ऐसे दुर्गम क्षेत्रों में हैं, जहां जीप या कार नहीं चलाए जा सकते. कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जहां टेलीफोन के लिए तार नहीं बिछे हैं, वहीं कुछ क्षेत्र डेड नेटवर्क क्षेत्र में होने के कारण वहां वायरलेस सेट ठीक से काम नहीं करता. झारखंड और छत्तीसगढ़ में नक्सली संगठन अक्सर पुलिस फोर्स से वाहन और वायरलेस सेट जबरन छीन लेते हैं.

आज के दौर में अपराधी हाईटेक हो गए हैं, लेकिन हमारी पुलिस आज भी 155 साल पुराने पुलिस अधिनियम के तहत काम कर रही है. साइबर क्राइम के दौर में भी किसी सरकार ने 1861 के पुलिस अधिनियम में संशोधन की जरूरत महसूस नहीं की. ब्रिटिश शासन के दौरान 1902-03 में गठित भारतीय पुलिस आयोग की सिफारिशें आज तक सरकारी दफ्तर में धूल फांक रही हैं. इसके बाद भी, न जाने कितने पुलिस सुधार आयोगों का गठन हुआ, पर हालात जस-के-तस रहे. पुलिस सुधार की सिफारिशों के लिए धरमवीर की अध्यक्षता में 15 नवंबर, 1977 को गठित राष्ट्रीय पुलिस आयोग की रिपोर्ट सौंपने से पूर्व ही जनता पार्टी की सरकार सत्ता से बाहर हो गई.

1997 में तत्कालीन केंद्रीय गृह मंत्री इंद्रजीत गुप्त ने सभी राज्यों को पुलिस व्यवस्था में सुधार के निर्देश दिए थे. पर उनकी सिफारिशों पर किसी राज्य ने अमल नहीं किया. इसके बाद महाराष्ट्र के पुलिस अधिकारी जेएफ रिबैरो की अध्यक्षता में एक समिति का गठन हुआ, जिसकी सिफारिशों को भी अनसुना कर दिया गया. पद्मनाभैया समिति की रिपोर्ट को भी किसी सरकार ने तवज्जो नहीं दी.

शाह आयोग ने आपातकाल जैसी घटनाओं से बचने के लिए पुलिस को राजनैतिक प्रभाव से मुक्त करने की बात कही थी. कई अन्य रिपोर्ट में भी पुलिस को स्वतंत्र रूप से कार्य करने देने की सिफारिश की गई थी. बीएसएफ के पूर्व महानिदेशक प्रकाश सिंह ने 1996 में सुप्रीम कोर्ट में एक जनहित याचिका दायर की थी. इस याचिका पर एक दशक तक सुनवाई चली. इस दौरान कोर्ट ने कई पुलिस सुधार आयोगों की सिफारिशों का गहन अध्ययन किया. 22 सितंबर, 2006 को पुलिस सुधारों पर सुप्रीम कोर्ट ने अपना फैसला सुनाया. सुप्रीम कोर्ट ने पुलिस पर राज्य सरकार का प्रभाव कम करने और वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों का न्यूनतम कार्यकाल दो साल करने सहित कई अन्य सिफारिशें कीं. कानून व्यवस्था की बहाली और आपराधिक मामलों की जांच के लिए अलग-अलग पुलिस इकाइयों के गठन और पुलिस की सेवा शर्तों के लिए पुलिस इस्टैब्लिसमेंट बोर्ड के गठन के दिशानिर्देश भी दिए गए थे. पुलिस से संबंधित शिकायतों की जांच के लिए भी एक अलग पुलिस शिकायत प्राधिकरण के गठन के निर्देश दिए थे. लेकिन दुर्भाग्यवश अब तक इसका गठन नहीं हो सका है. राजनीतिक सत्ता को इस बात का डर सता रहा है कि अगर उन्होंने इन बातों पर अमल किया, तो पुलिस पर उनका नियंत्रण नहीं रहेगा. इसके बाद कई राज्य सरकारों ने सुप्रीम कोर्ट के निर्देशों का पालन करने के लिए वैकल्पिक रास्ते तलाश लिए. उन्होंने राज्य में अपने-अपने पुलिस अधिनियम बना लिए. सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि ये निर्देश सभी राज्य सरकारों पर तभी तक लागू होंगे, जब तक कि वे अपने यहां पुलिस सुधार से संबंधित कानून नहीं बना लेती. कई राज्य सरकारों ने इसी का फायदा उठाकर पुलिस सुधार के कार्यों को पलीता लगा दिया. सत्ता में आने वाली हर सरकार पुलिस के पुराने ढांचे को बनाए रखना चाहती थी, ताकि वह पुलिस बल का मनमाने तरीके से इस्तेमाल कर सके. 21 जुलाई 2009 को सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस ने कहा कि कोई भी राज्य सरकार पुलिस सुधार मामले में सहयोग नहीं कर रही है. इसी साल अगस्त महीने में पुलिस सुधार की सिफारिश को लेकर मॉनीटरिंग कमिटी का भी गठन किया गया. इतना ही नहीं, नवंबर 2010 में सुप्रीम कोर्ट ने चार राज्यों को लेटलतीफी के कारण नोटिस भी भेजा था.

ब्रिटिश सरकार के समय पूरे भारत में एक पुलिस एक्ट था. आज जिस राज्य सरकार ने जैसा चाहा, वैसा पुलिस एक्ट बना लिया. अगर हम स्मार्ट पुलिस की बात करते हैं, तो सबसे पहले हमें सभी राज्यों के पुलिस एक्ट में एकरूपता लानी होगी. आज भी सभी राज्यों में पुलिस प्रमुख का चयन सत्तारूढ़ राजनीतिक पार्टी ही करती है. वहीं पुलिस सुधार के समर्थकों का भी मानना है कि पुलिस कहीं तानाशाही रवैया न अपना ले, इस पर भी नियंत्रण के लिए एक निगरानी तंत्र का होना जरूरी है.■

कश्मीर: एनआईए टेरर फंडिंग पर ठोस सबूत नहीं जुटा पा रही है

हारून रेशी

राष्ट्रीय जांच एजेंसी पिछले तीन महीने से कश्मीर में टेरर फंडिंग यानी आतंकवाद की आर्थिक सहायता के आरोपों पर आधारित केस की जांच कर रही है. हुर्रियत के सात नेताओं को गिरफ्तार किया जा चुका है. उनसे कोर्ट रिमांड पर पूछताछ की गई है. ये सारे हुर्रियत नेता इस समय तिहाड़ जेल में हैं. इनके अतिरिक्त एनआईए ने दर्जनों लोगों से पूछताछ की है. गिलानी के दोनों बेटों नसीम गिलानी और नईम गिलानी को भी पूछताछ के लिए दो बार दिल्ली बुलाया गया. घाटी के विभिन्न क्षेत्रों में छापे मारे गए. कई व्यापारियों के व्यापार से संबंधित रिकॉर्ड जब्त किए गए. कई युवाओं को गिरफ्तार किया गया. वास्तविकता यह है कि सारी कार्रवाई के बावजूद अभी तक एनआईए कोई ठोस सबूत सामने लाने में असफल रही है, जिससे टेरर फंडिंग का आरोप साबित किया जा सके.

एनआईए अगर अब तक कुछ सामने लाई है तो ये कि कुछ हुर्रियत नेताओं के पास आय से अधिक संपत्ति है. अगर ये सच भी हो और साबित हो जाए कि उनके पास ऐसी संपत्ति है तो ये केवल करप्शन केस हो सकता है, टैक्स चोरी का मामला हो सकता है, लेकिन एनआईए ने तो आतंकवाद की फंडिंग और देशद्रोह के केस दर्ज किए हैं. ये खतरनाक आरोप कैसे साबित हो सकते हैं? तीन महीने से एनआईए के दर्जनों अधिकारी श्रीनगर में डेरा जमाए हुए हैं. आए दिन छापे मारे जा रहे हैं. गिरफ्तारियां हो रही हैं, लेकिन तीन महीने गुजरने के बावजूद एनआईए न तो किसी अदालत में कोई चालान पेश कर सकी है और न ही कोई ऐसा सबूत सामने ला सकी है, जिससे ये अंदाजा होता कि वाकई इस केस की कुछ बुनियाद है. इस बीच हैरान करने वाली बात ये है कि नेशनल टेलीविजन चैनल कश्मीर में एनआईए के छापों को इतना बढ़ा-चढ़ा कर पेश कर रहे हैं, जैसे कश्मीर में जो कुछ हो रहा है, उसके सभी तार टेरर फंडिंग से जाकर मिलते हैं. इन टीवी चैनलों में कोई ये नहीं कहता है कि यहां वाकई एक आंदोलन चल रहा है, जिसे जनता का समर्थन हासिल है. इलेक्ट्रॉनिक मीडिया यहां के मानव अधिकार हनन का कभी जिक्र नहीं करता और न ही कश्मीर के बारे में केन्द्र सरकार की गलत पॉलिसी के संकेत देता है. सारा फोकस टेरर फंडिंग के केस पर है. पूरे भारत में ये धारणा फैला दी गई है कि कश्मीर में पैसा देकर पत्थर फिकवाए जाते हैं, गोलियां चलाई जाती हैं और प्रदर्शन करवाए जाते हैं. हालांकि पिछले एक साल के दौरान भारत के कई प्रमुख लोगों ने कश्मीर का दौरा कर यहां के जमीनी हालात की समीक्षा की. उन्होंने दो टूक लफ्जों में बता दिया कि कश्मीरी जनता भारत सरकार से नाराज है और यहां वाकई जनता के साथ दुर्व्यवहार हो रहा है. जुलाई 2016 में जब घाटी के हालात बहुत ज्यादा खराब हुए और यहां एक विरोध की लहर छिड़ गई, तब उस समय वरिष्ठ पत्रकार संतोष भारतीय, अशोक वानखेडे और अभय कुमार दुबे, पहले तीन लोग थे जो अपनी जान जोखिम में डालकर जमीनी हालात की समीक्षा करने यहां पहुंचे. उन्होंने जो कुछ भी अनुभव किया, उसे जस-का-तस जनता तक पहुंचा दिया. संतोष भारतीय ने प्रधानमंत्री के नाम एक खुला खत लिखकर उनकी गलतियों की निशानदेही भी की.

उसके बाद कई दिग्गज लोगों ने घाटी का दौरा कर यहां के जमीनी हालात पर अपनी रिपोर्ट जनता के सामने रखी. भाजपा के सीनियर लीडर पूर्व विदेश मंत्री यशवंत सिन्हा के नेतृत्व में कंसर्न्ड सीटिजन ग्रुप के नाम से जानी जाने वाली टीम ने अब तक तीन बार कश्मीर के दौरे किए. अपने वर्तमान दौरे के बाद उन्होंने नई दिल्ली में एक रिपोर्ट भी पेश की. हालांकि अपने दौरे के बाद भी इस टीम ने एक रिपोर्ट केन्द्रीय गृह मंत्रालय को पेश की थी. अपनी हालिया रिपोर्ट में भी यशवंत सिन्हा के नेतृत्व वाली टीम ने कश्मीर के हालात को परिलक्षित किया. इस रिपोर्ट में टीम ने साफ कहा कि पिछले दौरों के विपरीत अबकी बार उन्होंने ये अनुभव किया है कि कश्मीरी जनता और यहां के नेताओं में निराशा बढ़ गई है. रिपोर्ट में कहा गया है कि कश्मीरियों के साथ बातचीत न किया जाना, यहां के टूरिज्म और व्यापार पर नकारात्मक प्रभाव होने के कारण निराशा बढ़ी है. रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि कश्मीर और नई दिल्ली के बीच खाई और बढ़ गई है. जो लोग पहले अच्छी तरह बात करते थे, वे भी अब मिलिटेंट्स और अलगाववादियों के अंदाज में बात करने लगे हैं. लोग शिकायत कर रहे हैं कि फौजी एप्रोच अख्तियार किया जा रहा है. बल्कि संविधान की दफा 35 ए की वजह से कश्मीर में नागरिकता के कानून को सुरक्षा हासिल है, जिसे खत्म करने की कोशिश की जा रही है. इस तरह से कश्मीरी जनता के खिलाफ कानूनी और सांविधानिक मोर्चा भी खोल दिया गया है.

एनआईए छापों के बारे में यशवंत सिन्हा की टीम की रिपोर्ट में कहा गया है कि यहां लोगों में अवधारणा है कि ये साबित करने की कोशिश की जा रही है कि कश्मीर की अशांति केवल पाकिस्तान की फंडिंग की वजह से हुई है, जो बिल्कुल गलत है.

ऐसा नहीं है कि कश्मीर के हालात के बारे में ये कोई पहली तटस्थ रिपोर्ट है. इससे पहले भी सियासी, पत्रकारों और मानवाधिकार संगठनों से संबंधित लोगों ने कश्मीर के जमीनी हालात को अपनी रिपोर्ट में प्रतिबिंबित किया है. इतना ही नहीं, बल्कि पिछले तीन दशकों के दौरान राम जेठमलानी, केसी पंत, एनएन वोहरा, वजाहत हबीबुल्ला और अन्य कई प्रमुख लोगों से लेकर सरकार की तरफ से स्थापित वर्किंग ग्रुप्स और वार्ताकारों की टीमों ने कश्मीर के हालात के बारे में अपनी सिफारिशें और रिपोर्ट्स केन्द्र सरकार को पेश की हैं. लेकिन इन सारी रिपोर्ट्स को केन्द्र सरकार ने हमेशा की तरह रद्दी की टोकरी में फेंक दिया. इस वक्त केन्द्र सरकार और कुछ न्यूज चैनल का सारा फोकस कश्मीर में एनआईए की जांच पर है. ये दिखाने की कोशिश की जा रही है कि यहां जो कुछ भी हो रहा है, वो केवल फंडिंग का मामला है. होना तो ये चाहिए था कि एनआईए की जांच के साथ-साथ कश्मीर के सियासी मसले को हल करने की गंभीर कोशिशें भी होतीं. लेकिन केन्द्र सरकार ये अवधारणा देने की कोशिश कर रही है कि यहां कोई मसला ही नहीं है. मसला सिर्फ इतना है कि कहीं से पैसा आता है और उसके बिना पर कश्मीर में हालात खराब किए जाते हैं. एक बार ये पैसे का खेल बंद हो तो कश्मीर का मसला खुद ब खुद हल हो जाएगा. केन्द्र सरकार के इस अवास्तविक रवैये की वजह से ही कश्मीर में निराशा बढ़ रही है. इसके नतीजे में हर गुजरने वाले दिन के साथ कश्मीरी जनता और नई दिल्ली के बीच खाई बढ़ती जा रही है.■

मुंबई बम विस्फोट केस

24 साल बाद भी अधूरी सज़ा

जय प्रकाश पाण्डेय

किसी भी अपराध के बाद अगर दोषी को सजा दिलाने में दो दशक से अधिक का वक्त लग जाए तो पीड़ित पक्ष द्वारा न्याय की अहमियत पर सवाल खड़ा करना लाज़िमी है. मुंबई बम धमाके के दोषियों को टाडा अदालत द्वारा दी गयी सजा पर आम लोगों की असंतुष्टि यही बताती है. हमारे यहां बड़े अपराधों की सजा दिलाने में भी कानूनी एजेंसियों को कितना लंबा वक्त लग जाता है, मुंबई बम विस्फोट मुकदमा इसका ताजा उदाहरण है. विशेष टाडा अदालत ने मुंबई बम धमाकों के 24 साल बाद मुकदमे के दूसरे चरण का फैसला सुनाते हुए दो दोषियों को सजा–ए–मौत और गैंगेस्टर अबू सलेम सहित दो अन्य को उम्रकैद की सजा सुनाई है.

आइए देखते हैं कि यह मुकदमा किस दौर से गुजर कर यहां तक पहुंचा है. वह 12 मार्च, 1993 की तारीख थी. देश की व्यापारिक राजधानी मुंबई में सूरज उस दिन भी अपने ही अंदाज में परवान चढ़ा. मुंबईवाले अपने कामों में मशगूल थे. मुंबई लोकल और ईस्ट–वेस्ट की बसों पर आवाजाही जस की तस थी कि एक–एक कर के बम धमाके होने शुरू हो गए. दोपहर 1:30 बजे बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज की 28 माले की बिल्डिंग में पहला धमाका हुआ. यहां बेसमेंट में कार बम इतनी जोर से फटा कि आसपास की बिल्डिंगों तक में कई ऑफिस डैमेज हो गए. खिड़की के शीशों की चिन्दियां सैकड़ों को घायल करने में कामयाब रहीं. इस धमाके में 50 लोग मारे गए.

मुंबई ही नहीं, पूरा देश दहल गया था

मुंबई के लोग और पुलिस ऐसे हमले के लिए तैयार नहीं थे. अभी पुलिस इस हमले में घायलों को उचित इलाज मुहैया कराने में जुझ ही रही थी कि दूसरा धमाका कॉरपोरेशन बैंक के मांडवी ब्रांच में हुआ और फिर तो जैसे धमाकों की लड़ियां लग गईं. एक घंटे के भीतर मुंबई शहर में उस दिन 12 बम धमाके हुए थे. ज्यादातर बम स्कूटर और कार में रखे गए थे. चहुंओर धुआं, खून के छींटे, लाशें, अफरा–तफरी और बर्बादी. सिलसिलेवार तरीके से हुए इन बम धमाकों की गूंज आज भी देश भूला नहीं है. अखबारों में छपी तस्वीरें, जैसे दिमाग पर चस्पां हैं. उस धमाके में किसी का बेटा मरा था, तो किसी का भाई, किसी की मांग उजड़ी थी, तो कोई अनाथ हुआ था. किसी की गोद सूनी हुई थी तो किसी की सेज. उस दिन मुंबई में कुल 257 लोग मारे गए थे और 713 लोग घायल हुए थे. केवल मुंबई ही नहीं, पूरा देश दहल गया था.

पुलिस को इन विस्फोटों के कुछ समय बाद ही शुरुआती जांच में पता चल गया कि घटना के पीछे अंडरवर्ल्ड सरगना दाऊद इब्राहिम का हाथ है. कहते हैं, दाऊद इब्राहिम भारतीय राज्य व्यवस्था यानी केंद्र सरकार से बाबरी मस्जिद ढहाए जाने का बदला लेना चाहता था और इसके लिए उसने निर्दोष लोगों को निशाना बनाया. वह भी उस घटना के लिए, जिसमें मुंबई के लोगों का कोई हाथ नहीं था. मुंबई वाले तो खुद पीड़ित थे. फिर इसी मुंबई महानगर में उसका बचपन बीता था, पर उसके दिमाग में बाबरी मस्जिद के मुद्दे पर देश भर में हुए दंगों का बदला लेने का जैसे भूत सवार था. याद रहे कि 6 दिसंबर 1992 को अयोध्या में विवादित ढांचा ढहाए जाने के बाद मुंबई सहित पूरे देश में दंगे भड़क गए थे. इस मामले में मुकदमा भी कायम हुआ था, जिसमें भाजपा के आज के कई दिग्गज लोग आरोपी बनाए गए थे, जिन्हें अभी भी सजा नहीं दिलाई जा सकी है.

लेखक एस हुसैन जैदी ने अपनी किताब 'ब्लैक फ्राइडे' में लिखा है कि 6 दिसंबर 1992 को अयोध्या में विवादित ढांचे को ढहाए जाने के बाद खामोश बैठे माफिया सरगना दाऊद इब्राहिम को कुछ मुस्लिम महिलाओं ने डिब्बे में चूड़ियां रखकर भेजी थीं. यही वह चीज थी, जिस पर दाऊद भड़क गया और उसके बाद ही उसने अपने गैंग को मुंबई की बर्बादी का आदेश दिया. दरअसल, विवादित ढांचे के ढहाए जाने और मुंबई में छिटपुट दंगों के बाद दाऊद पर बदला लेने का दबाव डाला जा रहा था. उसके कई करीबी चाहते थे कि वह कुछ ऐसा करे, जिससे बदला तो लिया ही जाये, एक संप्रभु और सुरक्षित देश के तौर पर भारत की इमेज भी हिल जाए.

मुंबई धमाके को पूरे सुनियोजित तरीके से अंजाम दिया गया था. अंडरवर्ल्ड डान दाऊद इब्राहिम का इशारा मिलने के बाद सबसे पहले मुंबई में धमाकों के लिए लोगों को चुना गया. उन्हें दुबई के रास्ते पाकिस्तान भेजकर ट्रेनिंग दी गई. स्मगलिंग के अपने नेक्सस का इस्तेमाल करते हुए दाऊद ने अरब सागर के रास्ते विस्फोटक मुंबई पहुंचाए थे. पुलिस ने धर–पकड़ शुरू की तो ताकतवर अपराधी विदेश भाग निकले, जिनमें दाउद इब्राहिम का पूरा परिवार और उसके अबू सलेम जैसे गुर्गे शामिल थे.

इस सिलसिले में हुई शुरुआती गिरफ्तारियों में छुटभैये अपराधियों और गैंगेस्टरों के साथ बॉलीवुड अभिनेता संजय दत्त का नाम भी शामिल था. अभियुक्त संख्या 117 के रूप में 19 अप्रैल, 1993 को उनकी गिरफ्तारी हुई. उस समय हुई पूछताछ में उन्होंने यह माना था कि अपने पिता सुनील दत्त को मिली धमकियों से आजिज आकर अपने परिवार की रक्षा के लिए उन्होंने इन अपराधियों से कलाश्निकोव जैसे हथियार खरीदे थे, पर उन्होंने इस बात से इनकार किया था कि वे बम धमाकों की साजिशों में शामिल थे.

तारीख़ पर तारीख़...

4 नवंबर, 1993 को जब इस मुकदमे में 10,000 से अधिक पन्नों का पहला आरोप–पत्र दाखिल किया गया, तो 189 आरोपियों में संजय दत्त भी शामिल किए गए थे. 19 नवंबर, 1993 को सीबीआई ने इस मामले को अपने हाथ में लिया. इसके बावजूद गवाहों की कमी, पैसे का प्रभाव, लचर आरोप आदि के चलते 10 अप्रैल, 1994 को टाडा कोर्ट ने 26 आरोपियों को बरी कर दिया. बाकी बचे 163 आरोपियों के खिलाफ आरोप तय किए गए और ट्रायल शुरू हुआ, पर इसमें भी कुछ लोग काफी सक्षम थे. वे ऊपरी अदालतों में चले गए.

कानूनी उठा–पटक का यह दौर कितना लंबा खिंचा, इसे ऐसे समझ सकते हैं कि अप्रैल 1995 में दो प्रभावशाली अभियुक्तों को उच्चतम न्यायालय ने आरोप मुक्त कर दिया, जिसमें ट्रैवल एजेंट और कभी मुंबई में समाजवादी पार्टी के नेता रहे अबू असीम आजमी और अमजद मेहर बख्श शामिल थे. आलम यह था कि साल 2007 में जब यह मुकदमा खत्म हुआ, तब इस मामले के सात अभियुक्तों का मुकदमा अलग कर दिया गया, उन पर अलग से केस चला, जिसमें से छह अभियुक्तों को सालों साल बाद इस साल 16 जून को दोषी करार दिया जा सका और सजा अब जाकर सितंबर में सुनाई गई.

अदालत ने अपने फैसले में दोषियों पर लगे आरोप की पुष्टि करते हुए कहा कि अभियोजन पक्ष ने यह साबित किया है कि अबू सलेम मुख्य साजिशकर्ताओं में से एक था और उसने अभिनेता संजय दत्त को तीन एके–56 राइफल, गोला बारूद और हथगोले दिए थे. संजय दत्त को शस्त्र अधिनियम के तहत दोषी ठहराया गया था. अदालत ने कहा कि दाऊद के भाई अनीस इब्राहिम और दोसा के करीबी रहे अबू सलेम दिघी से मुंबई खुद हथियार और गोला बारूद लेकर आए थे. 'यह इस साजिश की महत्वपूर्ण बात थी ताकि भारत के निर्दोष नागरिकों को आतंकित करने और उन्हें यातनाएं देने के लिए इन हथियारों का इस्तेमाल किया जा सके.'

टाडा कोर्ट के न्यायाधीश जीए सनप का यह भी कहना था कि उन्होंने सजा तो दे दी है, पर इस सजा को लागू करना–कराना अब केंद्र सरकार के अधिकार क्षेत्र में है. पुर्तगाल में 2002 में गिरफ्तार गैंगेस्टर अबू सालेम को 2005 में भारत लाया गया था. उसने दलील दी थी कि दो देशों के बीच प्रत्यर्पण संधि के अनुसार उसे 25 वर्षों से ज्यादा लंबी सजा नहीं दी जा सकती है. सजा सुनाते हुए अदालत ने कहा था कि बम विस्फोट की तुलना अन्य अपराध से नहीं की जा सकती. यह दुर्लभ मामले की श्रेणी में आता है. यह कोई सामान्य अपराध नहीं है.

न्यायाधीश का यह भी कहना था कि संविधान में न्यायपालिका और कार्यपालिका की भूमिका तय है. सजा सुनाना और उसे लागू करना दो भिन्न पहलू हैं. अदालत जब सजा सुना देती है तो उसे लागू कराना कार्यपालिका के दायरे में आ जाता है. केंद्र सरकार अपनी शक्ति का स्वेच्छा से इस्तेमाल करने के लिए स्वतंत्र है. वह पुर्तगाल को दिए गए आश्वासन को ध्यान में रखकर सजा लागू करा सकती है. उन्होंने यह भी कहा कि सजा में सलेम के जेल में बिताए गए समय की गणना 2005 से होगी न कि 2002 से. सुनवाई के दौरान गैंगेस्टर जेल में ही रहा है.

अदालत ने यह भी कहा कि ताहिर मर्चेंट मुख्य साजिशकर्ताओं में शामिल था, जिसने (मगोड़े साजिशकर्ता) टाइगर मेमन के साथ दुबई में साजिश रचने वाली कई बैठकों में शिरकत की. इतना ही नहीं, ताहिर ने कई सह–आरोपियों के आने–जाने का प्रबंध किया, ठहरने और यात्रा के खर्च की व्यवस्था की तथा उन्हें पाकिस्तान में प्रशिक्षण दिलवाया. अदालत ने फिरोज की इस दलील को भी खारिज कर दिया कि वह फिरोज खान नहीं बल्कि 'हमजा' था.

अदालत ने ताहिर मर्चेंट और फिरोज अब्दुल राशिद खान को मौत की सजा सुनाई तथा प्रत्यर्पित करके भारत लाए गए गैंगस्टर अबू सलेम व करीमुल्लाह खान को उम्रकैद की सजा सुनायी. इस मामले में दोषी ठहराए जाने के बाद 28 जून को मुंबई के जेजे अस्पताल में एक दूसरे आरोपी दोसा की दिल का दौरा पड़ने से मौत हो गयी थी. अदालत ने इन पर लगे आपराधिक षड्यंत्र, भारत के खिलाफ युद्ध और निर्दोषों की हत्या के आरोप को सही माना और कहा कि इन अपराधियों की साजिश केवल देश को जान–माल का नुकसान करने की ही नहीं थी, बल्कि उनके निशाने पर भारत की एकता, अखंडता और भाईचारा भी था. उन्होंने इन धमाकों से न केवल कानून और राज्य व्यवस्था को चुनौती दी थी, बल्कि वह जताना चाहते थे कि वे कुछ भी कर सकते हैं.

हालांकि अपराध की गहराई और उससे हुए नुकसान को देखते हुए यह सजा काफी कम है, पर अपराधियों की पहुंच, पैसे की ताकत और भय के उनके साम्राज्य को देखते हुए अदालत और जांच एजेंसियों की इस बात के लिए तारीफ की जानी चाहिए कि उन्होंने देशद्रोह जैसी इस घटना में शामिल लोगों को उनके किए की सजा दिलाई. सच तो यह है कि राष्ट्रद्रोह से जुड़े अपराधों में शामिल लोगों को किसी भी हाल में बख्शा नहीं जाना चाहिए.

न्यायालय का देर से आया यह फैसला भले ही मारे जाने वाले लोगों के परिवारों और दोषियों को सलाखों के पीछे पहुंचाने की कोशिश में जुटे पुलिसकर्मियों को उतना सुकून न दे, पर यह देश में कानून के राज्य की धमक तो छोड़ता ही है और एक बार फिर से यह बताता है कि एक लेवल के बाद केवल पैसे के दम पर इस देश में अपराध से बचना नामुमकिन है. हालांकि मुस्लिम समुदाय के लोगों का तर्क है कि क्या ही बेहतर होता अगर अदालतें लगे हाथ बाबरी मस्जिद ढहाने से सम्बंधित मुकदमे का भी फैसला दे देतीं तो देश की धर्मनिरपेक्ष छवि और सुधरती. ■

...अब ब्रिटेन में ज़ब्त हुई दाऊद की संपत्ति

दाऊद इब्राहिम दुनिया का दूसरा सबसे अमीर अपराधी है. हालांकि वह भारत का सबसे बड़ा दुश्मन है, पर उसके खिलाफ एक बड़ा एक्शन ब्रिटेन ने लिया है. ब्रिटेन में दाऊद इब्राहिम की करोड़ों की संपत्ति जब्त कर ली गई है. एक ब्रिटिश अखबार ने दाऊद की संपत्ति जब्त होने का दावा किया है. यहां दाऊद के पास होटल और कई घर मौजूद हैं. फिलहाल दाऊद की जब्त की गई संपत्ति की कीमत 42 हजार करोड़ बताई जा रही है. इससे पहले यूएई में दाऊद की करीब पंद्रह हजार करोड़ की प्रोपर्टीज पर वहां की सरकार ने शिकंजा कसा था.

ब्रिटेन के वार्विकशायर में दाऊद के कई होटल हैं. जबकि मिडलैंड में दाऊद की कई रिहायशी प्रॉपर्टी हैं. पिछले महीने ही यूके ट्रेजरी विभाग ने एक लिस्ट जारी की थी, जिसमें दाऊद के पाकिस्तान में तीन ठिकानों का जिक्र किया गया था. लंदन की प्रॉपर्टीज में सेंट जॉन वुड रोड, होर्नचर्च, एसेक्स, रिचमोंड रोड, टॉम्सवुड रोड, चिगवेल, रो हैम्पटन हाई स्ट्रीट, लंदन, लांसलोट रोड, थार्टन रोड, स्पाइटल स्ट्रीट, डार्टफर के बड़े–बड़े रिहायशी कॉम्प्लैक्स और कॉमर्शियल बिल्डिंग्स शामिल हैं.

यूके ट्रेजरी विभाग की रिपोर्ट में ये भी बताया गया था कि ब्रिटेन में दाऊद ने 21 फर्जी नामों से संपत्ति ले रखी है. ब्रिटेन में दाऊद ने 21 फर्जी नामों से संपत्ति ले रखी है. उसके 21 नामों में अब्दुल शेख इस्माइल, अब्दुल अजीज, अब्दुल हमीद, अब्दुल रहमान, शेख मोहम्मद इस्माइल, अनीस इब्राहिम, शेख मोहम्मद भाई, बड़ा भाई, दाऊद भाई, इकबाल, दिलीप, अजीज इब्राहिम, दाऊद फारूकी, अनीस इब्राहिम, हसन शेख, दौद हसन, शेख इब्राहिम कासकर, दाऊद हसन, इब्राहिम मेमन, साबरी दाऊद, साहब हाजी और सेठ बड़ा शामिल हैं.

भारत सरकार के सूत्रों के मुताबिक, 'दाऊद का ज्यादातर पैसा ब्रिटेन, दुबई और भारत में ही निवेश किया गया है. भारत सरकार दाऊद को गिरफ्तार करने की सालों से कोशिश कर रही है, पर वह पाकिस्तान के अपने ठिकाने पर पाक सेना की सुरक्षा में बिजनेस कर रहा है. अब उसकी संपत्ति जब्त कर उस पर और उसके रहनुमाओं पर दबाव बनाया जा रहा है. इससे उसका नेटवर्क भी टूटेगा. प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की काफी कोशिशों के बाद दाऊद इब्राहिम को ग्लोबल टेरेरिस्ट घोषित किया जा सका, इसी के बाद दुनिया भर में फैले उसके तमाम बिजनेस और प्रॉपर्टी की पहचान कर उन्हें जब्त किया जा रहा है. भारत सरकार ने कई देशों को दाऊद की संपत्तियों के बारे में पुख्ता जानकारियां दी हैं, जिसके बाद दाऊद को नेस्तनाबूत करने के लिए संबंधित सरकारें कार्रवाई कर रही हैं. ■

feedback@chauthiduniya.com

कुपोषित झारखंड

बच्चों को मार रहा बीमार सिस्टम

न्यायालय ने यह टिप्पणी करते हुए कहा कि कुपोषण से लगातार हो रही मौतें चिंता का विषय हैं एवं यह स्वास्थ्य सेवाओं में गंभीर कमी के परिचायक हैं. कल्याणकारी राज्य का यह कर्तव्य है कि वह शिक्षा और स्वास्थ्य की बेहतर सुविधाएं उपलब्ध कराए. कुपोषण और गर्भवती महिलाओं के समुचित इलाज के लिए बेहतर प्रयास करने की जरूरत है. इस राज्य में कुपोषण एक बड़ी समस्या है. इसके लिए एनएचआरएम को विशेष कार्य करने की जरूरत है. सरकार भी मानती है कि बच्चे कुपोषित हो रहे हैं.

प्रशांत शरण

मुख्यमंत्री रघुवर दास बातें तो बड़ी-बड़ी करते हैं, लेकिन काम वही ढाक के तीन पात वाला होता है. कुपोषण को ले कर भी मुख्यमंत्री ने दावा किया था कि पूरे झारखंड को कुपोषण से मुक्त कर दिया जाएगा, लेकिन हुआ ठीक इसका उल्टा. एक माह के भीतर राज्य के तीन बड़े अस्पतालों में केवल कुपोषण से ही 500 से ज्यादा बच्चों की मौत हो गई. इससे स्वास्थ्य महकमे में खलबली तो मची, पर बच्चों की मौत का सिलसिला थम नहीं रहा है. उच्च न्यायालय ने जब राज्य सरकार को फटकार लगाई, तब सरकार कुछ एक्शन में नजर आई. स्वास्थ्य विभाग ने डॉक्टरों को जिम्मेदारी के साथ काम करने का निर्देश दिया.

भयावह हैं आंकड़े

कुपोषण से सम्बन्धित आंकड़ों पर अगर गौर करें, तो राज्य के 47 फीसदी बच्चे कुपोषण के शिकार हैं. राज्य में औसतन हर वर्ष आठ लाख बच्चों का जन्म होता है, लेकिन इनमें से 29 हजार बच्चे तो अपना पहला जन्मदिन भी नहीं मना पाते हैं. ये जन्म से ही बेहद कमजोर एवं कम वजन वाले होते हैं. दरअसल, झारखंड में जन्म लेने वाले लगभग आधे बच्चे कुपोषण के शिकार होते हैं. यही वजह है कि पांच साल तक की उम्र के जिन बच्चों की मौतें होती हैं, उनमें से 45 फीसदी मौतों का कारण कुपोषण होता है. झारखंड में कुपोषण की भयावहता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि इस मामले में झारखंड की तुलना अब अफ्रीकी देशों से की जा रही है. कुपोषण के मामले में झारखंड की तुलना में बिहार और छत्तीसगढ़ की स्थिती को बेहतर बताया गया है. राज्य सरकार ने गर्भवती महिलाओं और बच्चों में कुपोषण दूर करने के लिए

दर्जनों योजनाएं शुरू की, पूरक पोषाहार योजना के तहत 3442 करोड़ रुपए खर्च किए गए, पर कुपोषण घटने के बजाय बढ़ता ही जा रहा है. दरअसल, इन योजनाओं में भ्रष्टाचार चरम पर है. राजनेताओं, अधिकारियों और बिचौलियों की मिलीभगत से योजनाओं की राशि का बंदरबांट हो जाता है और जहां तक राशि पहुंचनी चाहिए वहां पहुंच नहीं रही. परिणामस्वरूप राज्य में कुपोषित माताओं और बच्चों की संख्या में कोई कमी नहीं आ रही है. 42 लाख बच्चे जो पांच वर्ष के हैं, इनमें से आधे करीब 20 लाख बच्चे कुपोषित हैं. लड़कियों में तो कुपोषण की स्थिती और भी भयावह है. राज्य में 18 वर्ष से कम उम्र की लगभग 65 लाख लड़कियों में से 67 फीसदी लडकियां कुपोषण की शिकार हैं. यहां कम आयु में ही लड़कियों की शादी हो जाती है और एनेमिक मां के बच्चे भी कुपोषित ही पैदा होते हैं. कुपोषण की इस भयानक स्थिति में बच्चों की जिंदगी बचाना राज्य सरकार के लिए एक बड़ी चुनौती है.

यूनिसेफ की स्टेट हेड डॉ मधुलिका जोनाथन का कहना है कि राज्य में एनिमिया प्रमुख बीमारी है. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे चार के अनुसार झारखंड में 15 से 19 साल की 66 फीसदी लड़कियां एनिमिक हैं, वहीं 15 से 49 साल की 65 फीसदी महिलाएं भी इसकी चपेट में हैं. उन्होंने बताया कि पांच साल से कम उम्र के करीब 47 फीसदी बच्चों का वजन जरूरत से ज्यादा कम है. देश की एक विख्यात संस्था राष्ट्रीय पोषण संस्थान हैदराबाद ने भी झारखंड में बच्चों एवं महिलाओं के स्वास्थ्य सम्बन्धी दयनीय स्थिती की पुष्टि की है. संस्थान ने राज्य के पांच जिलो में विशेष अध्ययन किया था. एक साल के अध्ययन के दौरान चतरा, धनबाद, दुमका, गिरिडीह एवं कोडरमा में यह पाया गया कि कुपोषण के कारण 57 फीसदी बच्चे नाटे, 42 फीसदी बच्चे कम वजन के एवं 17 फीसदी बच्चे थके हारे हैं. संस्थान ने अपनी रिपोर्ट में इस बात का जिक्र किया है कि कुपोषण की सबसे सबसे भयावह स्थिती दुमका में है.

ख़ुद कुपोषित हो गया झारखंड पोषण मिशन

राज्य में कुपोषण की भयावह स्थिती को देखते हुए राज्य सरकार ने नवंबर 2015 में झारखंड पोषण मिशन की शुरुआत की थी. इसका नारा था, स्वस्थ मां स्वस्थ बच्चा. इस मिशन के अध्यक्ष स्वयं मुख्यमंत्री रघुवर दास हैं. मिशन में एक महानिदेशक स्तर के पदाधिकारी को रखा गया है. समाज कल्याण विभाग के सचिव भी इस मिशन में हैं. इसके क्रियान्वयन एवं मोनिटरिंग के लिए कई कमिटियां बनाई गई हैं. मुख्य सचिव की अध्यक्षता में भी एक कमिटी है. लेकिन इन सबके बावजूद यह पोषण मिशन भ्रष्टाचार की भेट चढ़ रहा है. इसमें भी बिचौलिए और अधिकारी हावी हैं. इस मिशन के तहत नए जन्म लेने वाले बच्चे के जीवन के पहले हजार दिनों पर फोकस किया जाना है. इसमें गर्भ के नौ माह भी शामिल हैं. इस दौरान गर्भवती माता तथा गर्भस्थ शिशु के पोषण का ध्यान रखने का प्रावधान है. जन्म के बाद शिशु के टीकाकरण एवं उसके पोषण को सुनिश्चित करना भी इस मिशन में शामिल है. लेकिन आपसी समन्वय के अभाव में काम ठीक ढंग से नहीं हो पाता है. इस मिशन के तहत राज्य के आंगनबाड़ी केन्द्रों को भी बच्चों एवं महिलाओं को पोषाहार देने की जिम्मेदारी दी गई है, पर राज्य के अधिकांश केन्द्र बंद ही रहते हैं. आंगनबाड़ी की मोनिटरिंग सिस्टम पूरी तरह से फेल है. आंगनबाड़ी केन्द्रों द्वारा चलाई जा रही पूरक पोषाहार योजना भी पूरी तरह से विफल है. केन्द्र प्रायोजित इस योजना पर राज्य गठन के बाद से अबतक 3442 करोड़ रुपए खर्च हो चुके हैं, लेकिन ग्रास रुट पर कुपोषण अभी तक बरकरार है. आंगनबाड़ी की कार्यशैली पर हमेशा सवाल खड़े होते रहे हैं. पूरे राज्य में 38432 आंगनबाड़ी केन्द्र हैं. आंगनबाड़ी केन्द्रों के लिए हर वर्ष मेडिसिन किट, प्री स्कूल किट, नापतौल मशीन, पकाने खाने के लिए बजट निर्धारित है. पर इन केन्द्रों में केवल बंदरबाट ही होता है. विभाग में भ्रष्टाचार चरम पर है.

न्यायालय की फटकार से टूटी तंद्रा

राज्य में कुपोषण से हुई मौतें स्वास्थ्य सुविधाओं की पोल खोलने के लिए काफी हैं. राज्य के दो बड़े अस्पताल, रांची के रिम्स एवं जमशेदपुर के एमजीएम अस्पताल में एक माह के भीतर कुपोषण से 300 बच्चों की मौत हुई, फिर भी इस पर कोई चर्चा नहीं हो रही है. राज्य सरकार के आलाधिकारियों के चेहरे पर कोई शिकन नहीं है. कुपोषण से मरने वाले बच्चों में अधिकांश एक साल से कम उम्र के थे. इस तरह कुपोषण से हर साल 45 हजार बच्चों की मौत हो जाती है. एमजीएम एवं रिम्स में हुई बच्चों की मौत पर सरकार की उदासिनता को देखने के बाद उच्च न्यायलय ने स्वत: संज्ञान लिया और राज्य सरकार को कड़ी फटकार लगाई. राज्य सरकार को इस बात का शपथ पत्र दायर करने का निर्देश दिया गया, जिसमें राज्य सरकार को यह बताना है कि बच्चों के कुपोषण को दूर करने एवं बेहतर स्वास्थ्य सुविधा के लिए राज्य सरकार क्या उपाए कर रही है. इस मामले में राज्य सरकार के मुख्य सचिव, स्वास्थ्य सचिव, वित्त सचिव एवं स्वास्थ्य निदेशक को प्रतिवादी बनाया गया है. उच्च न्यायालय ने दो सप्ताह के भीतर जवाब देने का निर्देश दिया है. न्यायालय ने यह टिप्पणी करते हुए कहा कि कुपोषण से लगातार हो रही मौतें चिंता का विषय हैं एवं यह स्वास्थ्य सेवाओं में गंभीर कमी के परिचायक हैं. कल्याणकारी राज्य का यह कर्तव्य है कि वह शिक्षा और स्वास्थ्य की बेहतर सुविधाएं उपलब्ध कराए. कुपोषण और गर्भवती महिलाओं के समुचित इलाज के लिए बेहतर प्रयास करने की जरूरत है. इस राज्य में कुपोषण एक बड़ी समस्या है. इसके लिए एनएचआरएम को विशेष कार्य करने की जरूरत है. सरकार भी मानती है कि बच्चे कुपोषित हो रहे हैं.

इधर राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने भी इस मामले को गंभीरता से लेते हुए राज्य सरकार को नोटिस भेजा है और छह सप्ताह के भीतर इस मामले में रिपोर्ट देने को कहा है. आयोग ने इस मामले में स्वास्थ्य मंत्रालय को भी सख्त निर्देश दिया है कि कुपोषण के मामले में झारखंड सरकार को ठोस दिशनिर्देश जारी किया जाय, ताकि कुपोषण से किसी की मौत न हो.

लीपापोती का सियासी राग

मुख्यमंत्री रघुवर दास ने कुपोषण से लगातार हो रही मौतों पर गंभीरता दिखाते हुए पूरे मामले की जांच कराने का आदेश दिया है. उन्होंने कहा कि कुपोषण दूर करे के लिए योजनाओं पर ठोस ढंग से काम होगा. अगर लापरवाही से मरीजों की मौत हुई, तो डॉक्टर और स्वास्थ्य कर्मी जिम्मेदार होंगे और दोषी अधिकारी नपेंगे. राज्य की समाज कल्याण मंत्री लुईस मरांडी ने भी इस मामले में सख्त रुख अपनाते हुए आंगनबाड़ी के सिस्टम को दुरुस्त करने का निर्देश दिया है. उनका कहना है कि आंगबाड़ी कुपोषण से लड़ने में निर्णायक साबित हो सकता है. साथ ही उन्होंने इसके लिए सभी वर्ग के लोगों को आगे आने की जरूरत पर भी जोर दिया है.

इधर राज्य सरकार के वरिष्ठ मंत्री सरयू राय ने स्वास्थ्य विभाग के कार्यकलापों पर ही सवालिया निशान खड़ा कर दिया है. उन्होंने कहा कि अस्पताल में बच्चे मर रहे हैं, लेकिन सरकार कह रही है कि ये कुपोषित बच्चे थे. आखिर कुपोषण दूर करने की जिम्मेदारी किसकी है. अस्पताल प्रबंधन द्वारा यह भी कहा जा रहा है कि मरने वाला बच्चा सिरियस था. सिरियस बच्चा अस्पताल में मोक्ष प्राप्त के लिए तो आता नहीं है, वह तो इलाज से ठीक होने आता है. उन्होंने कहा कि सरकार केवल उपलब्धियां गिनाती है, इसे देखने वाला कोई नहीं है. ■

feedback@chauthiduniya.com

जीडीपी में गिरावट चिंताजनक है

कमल मोरारका

www.kamalmorarka.com

मैं हाल में राजस्थान के अपने पैतृक शहर गया था. वहां व्यापारियों ने मुझसे शिकायत की कि उन्हें एक कंप्यूटर ऑपरेटर रखने के लिए 15-20 हजार रुपए अतिरिक्त खर्च करने पड़ेंगे, जिसका भार वे वहन नहीं कर सकते. मैंने उनसे कहा कि अब समय को मोड़ा नहीं जा सकता है. इन चीज़ों को समय पर करने के तरीके तलाश करने चाहिए. रिटर्न दाखिल करने के लिए सरकार ने दूसरी बार एक महीने का अतिरिक्त समय दिया है. मैं समझता हूं कि जीएसटी के मामले में किसी नतीजे पर पहुंचने से पहले उसे आजमाने के लिए 1-2 साल का मौक़ा दिया जाना चाहिए.

कुल मिलाकर देश का आर्थिक सूचकांक बहुत उत्साहजनक नहीं है. थोक मूल्य पिछले साल के मुकाबले बहुत ऊपर चढ़ गए हैं. महंगाई दर में भी वो गिरावट नज़र नहीं आ रही, जो होनी चाहिए थी. औद्योगिक सूचकांक में भी तीव्र गिरावट दर्ज की जा रही है, जिसकी वजह से जीडीपी खिसक कर 5.7 के स्तर पर आ गया है. गौरतलब है कि जीडीपी की यह गणना नई सीरिज के लिहाज़ से की गई है, पुराने के हिसाब से इसे 4 से भी कम होना चाहिए था. दरअसल यह चिंता का विषय है. वित्त मंत्री ने भी यह माना कि जीडीपी में गिरावट चिंता की बात है. राजनीति में सत्ताधारी दल, उसके प्रवक्ता और समर्थक कह सकते हैं कि हम बहुत अच्छा कर रहे हैं, लेकिन वो हमें कहीं नहीं ले जाता. नौकरियां नहीं आ रही हैं. अब यह साफ़ हो गया है कि (और यदि नर्म शब्दों में भी कहें तो) नोटबंदी ने कोई सकारात्मक मकसद पूरा नहीं किया है. इसने कितना नुकसान पहुंचाया है, इस पर बहस हो सकती है. इसमें कुछ सकारात्मक नहीं, सिवाय यह कहने के कि आने वाले समय में लोग लेस कैश के अभ्यस्त हो जाएंगे. जो मैं समझता हूं, भारत जैसे देश के लिए यह बहुत ही अस्पष्ट विचार है. खास तौर एक ऐसा देश, जहां अधिकतर लेन-देन कैश में होता है, जहां लोग कैश के अभ्यस्त हैं और कैश का यह मतलब काला धन नहीं होता है. कैश का मतलब काला धन होता है या सारा काला धन कैश में है कि धारणा इस गलत निर्णय का कारण बनी. बहरहाल, जो बीत गई सो बात गई. ये अब हमारे पीछे है. अब इस पर बार-बार बात करने का कोई मतलब नहीं है. हमें आशा करनी चाहिए कि सामान्य स्थिति जितनी जल्द हो, बहाल होगी. कम से कम नवम्बर तक तो बहाल हो ही जानी चाहिए, जब नोटबंदी के एक साल पूरे हो जाएंगे.

जीएसटी किसी भी देश के लिए एक मुश्किल प्रक्रिया है. यूरोप में इसे लागू किया गया क्योंकि वहां के अधिकतर देश यूनिटरी (एकलवादी) हैं. अमेरिका में इसलिए लागू नहीं हो सका क्योंकि वहां फ़ेडरल व्यवस्था है और वहां 52 राज्य हैं. भारत के लिए एक साहसिक फैसला था. वित्तमंत्री ने इस संबंध में राज्यों को मनाने की काफी कोशिश की, इसके बावजूद पेट्रोल और शराब इसके दायरे से बाहर रहे. इसका अर्थ ये हुआ कि केवल 60 प्रतिशत राजस्व को ही जीएसटी के तहत कवर किया गया. इसलिए इन दो चीज़ों के लिए उच्च दर रखा गया है, जो 12-28 प्रतिशत के बीच है. यदि आपने एक बार जीएसटी लागू करने का मन बना लिया तो ऐसी समस्याएं आएंगी ही. जीएसटी की दो या तीन दरें स्थापित करने में दो-तीन तिमाहियों या एक-दो साल का समय लग सकता है. यदि एक दर स्थापित हो जाए, तो ज़्यादा बेहतर है. दरअसल किसी भी देश में जीएसटी कामयाब नहीं हुआ है, जहां औसत दर 12-14 प्रतिशत से अधिक न हो, लेकिन 12-14 प्रतिशत के स्तर तक आने के लिए बहुत अधिक काम करने की आवश्यकता है. हालांकि यह सरकार बहुत जल्दबाजी में है, लेकिन सभी राज्यों को साथ लेकर 1 अप्रैल 2018 से जीएसटी को लागू करना चाहिए था. बहरहाल यह भी बीते दिनों की बात हो चुकी, हमें इसका अभ्यस्त हो जाना चाहिए. काग़ज़ी कार्रवाई बढ़ गई है और अब 37 रिटर्न दाखिल करने होंगे. कॉर्पोरेट सेक्टर और बड़ी कंपनियों को कोई खास परेशानी नहीं होगी, लेकिन छोटे व्यापारियों की मुश्किलें बढ़ गई हैं.

जीएसटी किसी भी देश के लिए एक मुश्किल प्रक्रिया है. यूरोप में इसे लागू किया गया क्योंकि वहां के अधिकतर देश यूनिटरी (एकलवादी) हैं. अमेरिका में इसलिए लागू नहीं हो सका क्योंकि वहां फ़ेडरल व्यवस्था है और वहां 52 राज्य हैं. भारत के लिए एक साहसिक फैसला था. वित्तमंत्री ने इस संबंध में राज्यों को मनाने की काफी कोशिश की, इसके बावजूद पेट्रोल और शराब इसके दायरे से बाहर रहे. इसका अर्थ ये हुआ कि केवल 60 प्रतिशत राजस्व को ही जीएसटी के तहत कवर किया गया. इसलिए इन दो चीज़ों के लिए उच्च दर रखा गया है, जो 12-28 प्रतिशत के बीच है. यदि आपने एक बार जीएसटी लागू करने का मन बना लिया तो ऐसी समस्याएं आएंगी ही. जीएसटी की दो या तीन दरें स्थापित करने में दो-तीन तिमाहियों या एक-दो साल का समय लग सकता है.

मैं हाल में राजस्थान के अपने पैतृक शहर गया था. वहां व्यापारियों ने मुझसे शिकायत की कि उन्हें एक कंप्यूटर ऑपरेटर रखने के लिए 15-20 हजार रुपए अतिरिक्त खर्च करने पड़ेंगे, जिसका भार वे वहन नहीं कर सकते. मैंने उनसे कहा कि अब समय को मोड़ा नहीं जा सकता है. इन चीज़ों को समय पर करने के तरीके तलाश करने चाहिए. रिटर्न दाखिल करने के लिए सरकार ने दूसरी बार एक महीने का अतिरिक्त समय दिया है. मैं समझता हूं कि जीएसटी के मामले में किसी नतीजे पर पहुंचने से पहले उसे आजमाने के लिए 1-2 साल का मौक़ा दिया जाना चाहिए. डीजल और पेट्रोल की दरों में उछाल की आलोचना की जा रही है. ये कहने में कुछ नहीं जाता कि ऑयल कंपनियों को खुली छूट दे दीजिए कि वे अपनी कीमतें खुद तय करें, लेकिन एक आम आदमी की इस पर नज़र रहती है. पेट्रोल का इस्तेमाल आम तौर पर कार रखने वाले लोग करते हैं, लेकिन उसका असर टैक्सी और बस के किरायों पर भी पड़ेगा और डीजल की बढ़ी कीमतों से आम आदमी सीधे तौर पर प्रभावित होगा. पेट्रोलियम मंत्री ने अहंकार भरे लहजे में कहा कि इस नीति पर पुनर्विचार करने का कोई सवाल ही नहीं पैदा होता है. ऐसे बयान लोकतंत्र में बहुत बुद्धिमतापूर्ण नहीं कहे जा सकते हैं. आप कह सकते थे कि हम इस पर नज़र रखे हुए हैं, यदि ज़रूरत पड़ी तो हम बदलाव करेंगे. पेट्रोल और डीजल के दामों का महंगाई दर पर प्रभाव पड़ेगा. बहरहाल सरकार, संबंधित विभाग, मुख्य आर्थिक सलाहकार और वित्त मंत्री अवश्य ही इस पर नज़र रखे होंगे. इस सिलसिले में एक ही सुझाव दिया जा सकता है कि ऐसे बदलाव कीजिए जिससे आम आदमी की परेशानियां ख़त्म हों, नहीं तो एक-दो साल में देश मुसीबत में होगा.

चुनाव आने वाले हैं. सरकार के पास बहुत अधिक विकल्प नहीं है. फिलहाल सरकार कुछ फैसले ले सकती है. एक साल बाद चुनावी दौर शुरू हो जाएगा, तब सरकार के लिए कोई फैसला लेना मुश्किल होगा. मुझे यकीन है कि ये सारे मुद्दे प्रधानमंत्री के संज्ञान में होंगे. छोटे और साधारण कारोबारियों व मध्यवर्ग को राहत पहुंचाने के लिए कैबिनेट सचिव और सचिवों की समिति को गंभीरता से विचार करना चाहिए. देखते हैं, क्या होता है! ■

feedback@chauthiduniya.com

कश्मीर का इतिहास : कल्हण बनाम ख़ालिद बशीर अहमद

शुजात बुखारी

पूर्व नौकरशाह खालिद बशीर अहमद की किताब *कश्मीर: एक्स्पोजिंग द मिथ बिहाइंड नैरेटिव* निस्संदेह अपनी तरह की पहली किताब है. इनसे पहले किसी भी मुस्लिम विद्वान ने इतिहास लेखन को इस तरह से नहीं देखा है. इस किताब के 387 पन्ने इतिहास के उस नैरेटिव को ख़ारिज करते हैं, जिसका साया एक लम्बे समय तक कश्मीर पर छाया रहा. विडम्बना यह है कि अगस्त महीने के मध्य में इस किताब का विमोचन किया गया, तो पाठकों ने इसके केवल एक अध्याय की बुनियाद पर अपनी प्रतिक्रिया दी. नतीजतन किताब का असल उद्देश्य पृष्ठभूमि में चला गया.

1148 में कल्हण द्वारा रचित ऐतिहासिक किताब राजतरंगिनी पर अहमद की चुनौती ने हंगामा खड़ा कर दिया. दरअसल अहमद की किताब इसी चुनौती के कारण महत्वपूर्ण है. कल्हण के इतिहास लेखन (हिस्ट्रियोग्राफ़ी) की पद्धति को उजागर करने के लिए अहमद ने साहस दिखाते हुए कल्हण के एक स्रोत की और नीलामाता पुराण की आलोचनात्मक विवेचना की है. मिसाल के तौर पर अहमद ने पौराणिक कथाओं पर कल्हण की निर्भरता को सवालों के घेरे में लिया है. उनका कहना है कि कल्हण ने 3000 वर्ष का इतिहास लिखने के लिए पौराणिक कथाओं का सहारा लिया है, जबकि उनके लिए कुछ सौ साल का वास्तविक इतिहास लिख पाना ही संभव था. लिहाज़ा इस अध्याय का शीर्षक 'माइंड्स आई' रखा गया है, जो कल्हण की इतिहास लेखन पद्धति से मेल खाता है. स्थानीय भाषा के प्रति कल्हण का भेदभाव और संस्कृत (जिसे वे प्यार करते थे) के स्रोतों पर निर्भरता पर भी वैसे ही सवाल खड़े होते हैं.

अहमद ने लिखा है कि जैसा कि नीलामाता पुराण और अन्य संस्कृत कार्यों को विरूपित कर प्रभावित किया गया था, राजतरंगिनी भी उन लोगों के हस्तक्षेप से नहीं बच सकी, जो इसकी व्याख्या करते हैं या इसे बुनियादी स्रोत सामग्री मानते हैं. अहमद अपने इस तर्क के बावजूद कि राजतरंगिनी का केवल एक हिस्सा इतिहास के रूप में लिया जा सकता है, वह इसे इस बात का श्रेय देते हैं कि कश्मीर का इतिहास लिखकर इन्होंने कश्मीर को पहचान देने का काम किया. अध्याय दर अध्याय यह स्पष्ट हो जाता है कि फिर, कश्मीरी पंडितों ने एक निश्चित कथा बुनी है, जिसने इस वास्तविकता को नजरअंदाज कर दिया है कि घाटी मुस्लिम बहुल क्षेत्र है. कश्मीरी मुसलमानों को इस तथ्य के बावजूद पीड़ित के रूप में दिखाया गया है कि 1947 के बाद उनके प्रतिनिधियों को सत्ता मिली. अहमद ने स्पष्ट रूप से कश्मीरी पंडितों द्वारा रची गई साजिशों की जांच की, जिसके तहत मुसलमानों को सज़ा देने के लिए कुछ ऐसी नीतियां तैयार की गईं. इससे कश्मीरी पंडितों के दृष्टिकोण का पता चलता है, जो वास्तविकता को स्वीकार नहीं करते और एक धारणा बनाई कि मुसलमान कट्टरपंथी हैं और उनका हिस्सा हड़पने वाले हैं. मलाइस शीर्षक वाले अध्याय में लेखक ने सुल्तान सिकंदर (1389-1413) का बचाव किया है. सिकन्दर शाह मीर राजवंश के छठे शासक थे, जिन्हें इस बात के लिए कुख्यात बना दिया गया कि वे मंदिरों का विनाश करते थे और प्रजा का उत्पीड़न करते थे.

लेकिन, लेखक साबित करते हैं कि मुस्लिम सल्तनत की स्थापना से लगभग तीन शताब्दी पहले हिंदुओं को इस्लाम में परिवर्तित करना शुरू हुआ था और 15 वीं सदी के अंत तक चरम पर पहुंच गया था. अहमद बहारिस्तान-ए-शाही, एक अज्ञात फ़ारसी क्रॉनिकल की आलोचना करते हैं, जिसके लेखक सुल्तान सिकंदर को बुरे रूप में पेश करता है. कश्मीरी पंडित लेखक आज भी इसका उल्लेख करते हैं. अहमद ने लिखा है कि राजा, जिस पर बहारिस्तान-ए-शाही ने मूर्तियों को तोड़ने का आरोप लगाया, वास्तव में उसने शारदा स्क्रिप्ट में 18 पंक्तियों का शिलालेख स्थापित किया, जिसमें हिंदू भगवान गणेश के श्लोक थे. उसने मंदिर निर्माण के अलावा पुराने मंदिरों की भी मरम्मत करवाई.

वे कई उदाहरण दे रहे हैं कि कैसे कश्मीर में आज भी प्राचीन मंदिर मौजूद हैं. लेखक ये प्रश्न भी पूछते हैं कि लेखकों ने इस बात पर चुप्पी क्यों साधे रखी कि कश्मीर में मिहिरकुला, जो 530 ईसा पूर्व कश्मीर आया, के कारण बौद्ध धर्म का सफाया हुआ था. पावर एक महत्वपूर्ण अध्याय है, जो पुस्तक के स्वर को स्थापित करता है, क्योंकि यह बताता है कि कैसे कश्मीरी पंडित सत्ता की राजनीति में प्रमुख खिलाड़ियों के रूप में उभरे, जो आज भी बदली नहीं है. एक दिलचस्प रहस्योद्घाटन यह है कि मुगल शासनकाल के दौरान, कश्मीरी पंडितों ने अपना टाइटल बदल लिया क्योंकि भारत के अन्य ब्राह्मणों की तुलना में उन्हें ग्लानि होती थी. अहमद लिखते हैं कि इसी तरह का एक व्यक्ति मुगल साम्राज्य के आखिरी राजा मुहम्मद शाह के पास गया था, जिसका नाम था जय राम भान, जो उसका दरबारी था. भान ने मोहम्मद शाह को कश्मीरी ब्राह्मणों को कश्मीरी पंडितों के रूप में मान्यता देने के लिए शाही फरमान जारी करने के लिए राजी किया, ताकि कश्मीरी ब्राह्मणों और भारत के अन्य ब्राह्मणों के बीच फर्क किया जा सके.

कश्मीरी पंडितों ने 1990 में घाटी छोड़ दिया. फिर उन्होंने फैसला किया कि उन्हें कश्मीरी हिंदू कहा जाना चाहिए, इससे वे सहधर्मियों की सहानुभूति आकर्षित करना चाहते थे. पंडित इतने माहिर थे कि उन्होंने मुगल और अफगान काल तक शासन किया. पंडित नंदराम टिक्कू काबुल के प्रधानमंत्री बने थे. वे इतने प्रभावशाली थे कि वे 1765 में कश्मीर से गवर्नर नूरूद्दीन खान को हटाने में सफल हुए.

जब अता मोहम्मद खान ने अफगान शासन के खिलाफ विद्रोह किया और प्रशासन में मुसलमानों की भागीदारी सुनिश्चित की तो कश्मीरी पंडित काबुल गए और सेना के जरिए उसे सत्ता से बेदखल कर दिया. यह सिख शासन और डोगरा शासन के दौरान जारी रहा. वास्तव में यह बीरबल धर था, जिसने 1819 में रंजीत सिंह को कश्मीर पर विजय प्राप्त करने के लिए आमंत्रित किया था. हालांकि रंजीत सिंह इसके लिए अनिच्छुक थे. यह पुस्तक उन घटनाओं को भी छूती है, जिन्हें केवल एक दृष्टिकोण से देखा गया है. उदाहरण के लिए, जब डोगरा शासक गुलाब सिंह ने 1846 में अमृतसर संधि के तहत अपने लोगों के साथ कश्मीर खरीदा था, तब कश्मीरी पंडित उनके पक्ष में थे. 13 जुलाई, 1931 को केन्द्रीय जेल में पुलिस की गोलीबारी में जब 23 मुस्लिम मारे गए थे, तब भी पंडित सरकार के पक्ष में थे.

अहमद ने 1990 के बाद उभरे नए नैरेटिव को बताया है. बताते हैं कि जेल में हुई हत्या के बाद हिंदू मारे गए और मंदिर नष्ट किए गए. उन्होंने पंडित लेखकों को यह बताने के लिए उद्धृत किया कि 1990 माइग्रेशन के बाद कैसे एकतरफा कहानी बयान की गई. पंडित समुदाय के इतिहासकारों ने 1931 से 1990 तक लिखे गए इतिहास में तथाकथित लूटपाट और तबाही का उल्लेख नहीं किया है. कश्मीर के मुसलमानों के खिलाफ भेदभाव स्पष्ट था. अहमद बताते हैं कि कैसे पंडितों ने ग्लेन्सी कमिशन की रिपोर्ट को नकार दिया. मुस्लिमों की शिकायतों को दूर करने के लिए नवंबर 1931 में महाराजा हरि सिंह ने इस कमिशन का गठन किया था. अहमद ने आंकड़ों के साथ दलील दी है कि मुसलमान 95 प्रतिशत के साथ बहुमत में थे, तो प्रशासन पर पंडितों का आधिक्य कैसे हो सकता था? किताब में 1967 के पंडित आंदोलन पर बहुत अधिक ध्यान दिया गया है. ये आन्दोलन इस वजह से हुआ था कि एक कश्मीरी पंडित लड़की परमेश्वरी ने एक कश्मीरी मुस्लिम गुलाम रसूल से विवाह किया था. आरएसएस के संरक्षण में ये आंदोलन काफी गंभीर हो गया था. बहुसंख्यक समुदाय की निंदा करने के लिए इस आन्दोलन का इस्तेमाल किया गया.

अहमद कश्मीरी पंडितों के पलायन के बारे में भी लिखते हैं. वे बताते हैं कि पलायन के लिए बहुसंख्यक लोग जिम्मेदार नहीं हैं, लेकिन राज्यपाल जगमोहन ने जरूर इसमें एक भूमिका निभाई. उन्होंने उन घटनाओं का जिक्र किया है जिसने इस घटना को जन्म दिया. कई जिम्मेदार कश्मीरी पंडितों का हवाला देते हुए वे लिखते हैं कि मुसलमानों ने उन्हें इस पलायन से रोकने का प्रयास किया था. उन्होंने ये भी बताया है कि कैसे आधिकारिक आंकड़ों के समर्थन से कश्मीरी पंडितों की हत्या और पलायन के आंकड़ों को बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया गया.

पुस्तक में यह भी बताया गया है कि कैसे एक अलग होमलैंड के रूप में कश्मीर की मांग कश्मीर को फिर से जीतने के लिए दक्षिणपंथी हिंदू संगठनों के बड़े एजेंडे का हिस्सा है. ये भी पढ़ना जरूरी है कि कैसे कश्मीरी पंडितों को लंबे समय तक मीडिया में प्रमुख स्थान दिया गया और इन्होंने जम्मू और कश्मीर में निर्वाचित सरकारों को अलग-थलग करने में सक्रिय रूप से भाग लिया. अहमद ये बताते हैं कि कश्मीर की अस्थिरता दिल्ली की गलत नीतियों के कारण है और इसमें कश्मीरी पंडितों के इनपुट का बड़ा योगदान है, जिनकी दिल्ली की सत्ता के गलियारों में अच्छी पैठ है.

अहमद ने एक महत्वपूर्ण तर्क दिया है कि यदि कश्मीरी पंडितों का दावा है कि कश्मीर उनका है, तो कश्मीर मुसलमानों का भी है, जो यहां के मूल निवासी हैं. पूर्वजों के धर्मांतरण के दावे से स्थिति नहीं बदलती. लेखक के अनुसार, एकमात्र तर्क जिसे लागू किया जा सकता है, वो ये है कि चूंकि उन्होंने अपने धर्म को बदल दिया, इसलिए जमीन पर उन्होंने अपना अधिकार खो दिया. ये तर्क सही नहीं है. अहमद अपने रिसर्च के भरोसे लंबे समय से माने जा रहे सच को चुनौती देते हैं. लेकिन ये भी दिलचस्प होगा कि क्या रिसर्च के आधुनिक वैज्ञानिक उपकरण 5000 साल पहले लिखे गए इतिहास को ध्वस्त कर सकते हैं. अहमद ने जो लिखा है, उस पर बहस की जरूरत है और भू-राजनीति में इतने बदलाव के बावजूद एक समुदाय का दूसरे के प्रति पक्षपातपूर्ण रवैये में क्यों परिवर्तन नहीं आया है. ■

अहमद ने एक महत्वपूर्ण तर्क दिया है कि यदि कश्मीरी पंडितों का दावा है कि कश्मीर उनका है, तो कश्मीर मुसलमानों का भी है, जो यहां के मूल निवासी हैं. पूर्वजों के धर्मांतरण के दावे से स्थिति नहीं बदलती. लेखक के अनुसार, एकमात्र तर्क जिसे लागू किया जा सकता है, वो ये है कि चूंकि उन्होंने अपने धर्म को बदल दिया, इसलिए जमीन पर उन्होंने अपना अधिकार खो दिया. ये तर्क सही नहीं है. अहमद अपने रिसर्च के भरोसे लंबे समय से माने जा रहे सच को चुनौती देते हैं. लेकिन ये भी दिलचस्प होगा कि क्या रिसर्च के आधुनिक वैज्ञानिक उपकरण 5000 साल पहले लिखे गए इतिहास को ध्वस्त कर सकते हैं.

-लेखक राइजिंग कश्मीर के संपादक हैं.

feedback@chauthiduniya.com

संतोष भारतीय

जब तोप मुक़ाबिल हो

सरकार क़र्ज़माफ़ी के नाम पर किसानों के साथ मज़ाक़ कर रही है

ये तो शुरू से मालूम था कि भारतीय जनता पार्टी अभी ही नहीं, अपने पहले अवतार जनसंघ से लेकर मोदी जी के अवतार तक अपनी प्राथमिकता में किसानों को कहीं नहीं रख रही है. किसान उसके लिए एक ऐसा बच्चा है, जो अनचाहा पैदा हुआ है और जिसे उसे जबरदस्ती पालना पड़ रहा है. चुनाव जीतने के लिए तो भारतीय जनता पार्टी किसानों की दुहाई देती है, लेकिन उनके लिए कुछ करने की कोई योजना न भारतीय जनता पार्टी की है, न भारतीय जनता पार्टी की सरकार की है और न उन राज्यों की है, जहां भाजपा की सरकारें हैं. दरअसल ये बहुत दुख के साथ लिखना पड़ता है कि किसानों ने 2014 के चुनाव में इस आशा में केन्द्र सरकार को दोनों हाथों से भर-भर कर वोट दिए, क्योंकि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कहा था कि उन्हें लागत से डेढ़ गुना ज्यादा फसल की कीमत मिलेगी और इसे सरकार सुनिश्चित करेगी. उस समय किसानों को नहीं मालूम था कि जिस एक शब्द 'जुमला' का प्रचलन अमित शाह ने कर दिया है, ये भी जुमला साबित होगा. पंद्रह से बीस लाख रुपए हरेक के बैंक खातों में देने का वादा नरेन्द्र मोदी ने किया था, जिसे अमित शाह ने कहा था कि वो सिर्फ एक जुमला था. जुमला यानी झूठ. क्या वैसा ही झूठ किसानों को उनकी फसल की डेढ़ गुनी कीमत देने के वादे के रूप में किया था. यह सरासर झूठ था, क्योंकि उसका कोई रास्ता, कोई चर्चा, कोई योजना दिखायी नहीं पड़ती. अभी उत्तर प्रदेश के चुनाव में प्रधानमंत्री ने कहा था कि उत्तर प्रदेश सरकार की पहली कैबिनेट मीटिंग में कर्ज माफी का फैसला होगा. कैबिनेट की पहली मीटिंग कुछ दिनों तक टली, सरकार का काम चला, लेकिन जब औपचारिक बैठक हुई तो उसमें किसानों की कर्ज माफी की घोषणा हुई. एक लाख तक के कर्ज को माफ करने की घोषणा योगी सरकार ने की, लेकिन इस घोषणा पर अमल के लिए यह कहा गया कि बजट का इंतजार करना चाहिए. लोगों ने बजट का भी इंतजार किया और अब, जब इसकी सच्चाई सामने आ रही है तो लोगों के होश गायब हैं. किसानों को लग रहा है कि उन्हें तमाचे पर तमाचे नहीं, बल्कि जूते पर जूते लग रहे हैं.

उत्तर प्रदेश के किसानों को ये भी लगता है कि जैसा उत्तर प्रदेश में हो रहा है, वो बिना प्रधानमंत्री मोदी की सहमति के नहीं हो रहा है. इसमें अरुण जेटली का वित्त मंत्रालय शामिल है, केन्द्र की सरकार शामिल है और उत्तर प्रदेश की सरकार उनकी राय से संभवतः ये सारे काम कर रही है. इस समय एक लाख रुपए तक फसलों के कर्ज को माफ करने के आदेश पर अमल के लिए हर जिले में कर्ज माफी के सर्टिफिकेट बांटे जा रहे हैं. अब इस कर्ज माफी की हकीकत किसानों के दुखों का मजाक उड़ा रही है और उन्हें सर पीटने के लिए मजबूर कर रही है. पश्चिमी यूपी में अधिकारियों और बैंकों के गणित ने एक लाख की जगह बागपत के किसान के सिर्फ आठ पैसे और बिजनौर के किसान के सिर्फ नौ पैसे ही माफ किए हैं. 50 और 100 रुपए माफ होने वाले किसानों की सूची बहुत लंबी है. किसान उसको लेकर परेशान हैं और खुद को ठगा हुआ महसूस कर रहे हैं. खुद मुख्यमंत्री आदित्यनाथ योगी ने लगभग दस दिन पहले किसानों की कर्ज माफी स्कीम के तहत सर्टिफिकेट बांटने की शुरुआत की थी. एक लाख रुपए तक के कर्ज माफी के सर्टिफिकेट लेने गए काफी किसानों के होश तब उड़ गए, जब किसी को पांच सौ तो किसी को 100 और पचास रुपए माफी की जानकारी मिली. किसान अब इस मामले की जांच की मांग कर रहे हैं, लेकिन किससे जांच की मांग कर रहे हैं? उसी से जांच की मांग कर रहे हैं, जिसने उन्हें इस तरह का धोखा दिया है.

बिजनौर का उदाहरण लें, तो यहां 14188 किसानों का कर्ज माफ होना है. पहले फेज में पांच हजार छब्बीस किसानों को सर्टिफिकेट दिए गए. कई किसानों को सिर्फ 100 रुपए तो कई किसानों को सिर्फ 10 रुपए, 38 रुपए माफी के सर्टिफिकेट मिले. 114 किसानों का एक लाख तक का कर्ज जरूर माफ हुआ. एक किसान ने 60 हजार का कर्ज लिया था लेकिन सर्टिफिकेट में सिर्फ 18 रुपए ही माफ हुए हैं. एक हजार से कम कर्ज माफ वाले किसानों की तादाद करीब 23 है. इनमें नौ पैसे से लेकर 377 रुपए तक की कर्ज माफी वाले किसान भी शामिल हैं. नगीना के किसान बलिया के नौ पैसे, बास्टा के चरण सिंह 84 पैसे, आकू के रामधन के दो रुपए, अफजलगढ़ के भागेश के छह रुपए, भंडवार के हीरा के तीन रुपए, नजीबाबाद बैंक चौक के जसवंती के 21 रुपए, हीरकपुर के दयाराम के 91.52 रुपए, नाटौर की पद्मा देवी के 115 रुपए, धामपुर के बलजीत सिंह के 126 रुपए, कीरतपुर के दौलत सिंह के 377 रुपए माफ हुए हैं. इतनी बड़ी रकम सरकार ने माफ कर दी, इसके लिए सरकार को शाबाशी दी जाए या किसानों के दुर्भाग्य को या उस झूठ को, जो झूठ उत्तर प्रदेश के चुनाव में कर्ज माफी के नाम पर किसानों से बोला गया.

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के दूसरे जिले बागपत में भी किसानों के आठ पैसे तक ही माफ हुए हैं. लोहारा के किसान सतपाल के 12 रुपए, कांटा के धीरज के 14.38 पैसे, फैजपुर कराना के तिरपाल सिंह के आठ रुपए, हिसाबदा के सौराज सिंह के 156.61 रुपए, नैथला के महेश के 20.66 रुपए, पाली के तेजपाल सिंह के 959 रुपए माफ किए गए. इसी तरह किसान इनामुद्दीन के केनरा बैंक शाखा पुसार अड्डा में आठ पैसे, सुरेश पाल सिंह के सिंडिकेट बैंक अकाउंट में छह रुपए, हिरन गांव के पंजाब एंड सिंध बैंक के अकाउंट में छह रुपए, हरा गांव के बाबर सिंह के नौ रुपए, सतपाल के 12 रुपए कर्ज माफ हुए हैं. 50 रुपए तक के कर्ज माफ होने वाले करीब 22 किसान हैं.

उत्तर प्रदेश के किसानों को ये भी लगता है कि जैसा उत्तर प्रदेश में हो रहा है, वो बिना प्रधानमंत्री मोदी की सहमति के नहीं हो रहा है. इसमें अरुण जेटली का वित्त मंत्रालय शामिल है, केन्द्र की सरकार शामिल है और उत्तर प्रदेश की सरकार उनकी राय से संभवतः ये सारे काम कर रही है. इस समय एक लाख रुपए तक फसलों के कर्ज को माफ करने के आदेश पर अमल के लिए हर जिले में कर्ज माफी के सर्टिफिकेट बांटे जा रहे हैं. अब इस कर्ज माफी की हकीकत किसानों के दुखों का मजाक उड़ा रही है और उन्हें सर पीटने के लिए मजबूर कर रही है.

अब सवाल यह है कि ये किस्से सिर्फ इन्हीं दोनों जिलों के हैं है या लगभग हर जिले के हैं. हमारी जानकारी के हिसाब से उत्तर प्रदेश के अधिकांश जिलों में यही हालत है. तो हम क्या मानें, क्या ये अधिकारियों की चालाकी है या बैंक अधिकारियों के आंकड़ों का खेल है या सरकार जान-बूझकर वोट लेने के बाद किसानों को जूते पर जूते लगा रही है. सच्चाई क्या है? उत्तर प्रदेश सरकार इस मसले पर खामोश है. न कृषि सचिव कुछ बोल रहे हैं, न मुख्यमंत्री कुछ बोल रहे हैं और न सूचना विभाग कुछ बता रहा है, बस कर्ज माफी के सर्टिफिकेट बांटे जा रहे हैं. इसका प्रचार हुआ, लेकिन कितने के सर्टिफिकेट दिए गए, इस बात को उत्तर प्रदेश सरकार गोल कर गई है.

इतना ही कहा जा सकता है कि ऐसा मजाक, ऐसा झूठ, ऐसा धोखा, इसके पहले किसानों के साथ कभी नहीं हुआ. उसपर तुर्रा ये कि कभी मध्यप्रदेश के कृषि मंत्री, कभी किसी दूसरे राज्य के कृषि मंत्री, कभी भाजपा के सांसद अक्सर बातचीत में कह देते हैं कि किसानों द्वारा आत्महत्या किया जाना एक फैशन है और कर्ज माफी की मांग विरोधी दलों की साजिश है. अगर विरोधी दलों की साजिश थी या किसान, कांग्रेस या समाजवादी पार्टी की साजिश थी, तो भारतीय जनता पार्टी को ऐसा वादा चुनाव में करना ही नहीं चाहिए था कि एक लाख रुपए तक के कर्ज को सरकार आते ही माफ कर देगी. हम ये तो नहीं कहते कि आगे से झूठ बोलना बंद हो जाएगा, पर दुख जरूर होता है, जब वही सरकार खुद को वोट देने वाले किसानों के साथ एक बेहूदा और भद्दा मजाक करती है. क्या इसकी जिम्मेवारी मुख्यमंत्री आदित्यनाथ योगी की है? उन्हें जरूर पता होगा कि कर्ज माफी के नाम पर किस तरह के सर्टिफिकेट बांटे जा रहे हैं. अगर उन्हें नहीं पता तो इसका मतलब मुख्यमंत्री कार्यालय सही ढंग से काम नहीं कर रहा है और अगर उन्हें पता है और वो चुप हैं तो फिर वो इस साजिश में शामिल हैं या ये केन्द्रीय सरकार के इशारे पर हो रहा है. अफसोस की बात यह है कि भारतीय जनता पार्टी के किसान नेता जो अक्सर किसानों के हितों की बात करते दिखाई देते हैं वो भी इस मसले पर खामोश हैं. उत्तर प्रदेश भारतीय जनता पार्टी तो बिल्कुल ही खामोश है. ये खामोशी ये बताती है कि भारतीय जनता पार्टी के नेता और उनकी सरकार किसानों के साथ भद्दा मजाक करने के हमाम में पूरी की पूरी नंगी खड़ी है. ■

editor@chauthiduniya.com

आर्थिक सुधार : ग़रीबों की हो रही है अनदेखी

आर्थिक समीक्षा का दूसरा खंड रचनात्मक तो है, लेकिन इसमें सुधार के संकुचित एजेंडे का ही जिक्र है.

आर्थिक समीक्षा 2016-17 का दूसरा खंड इस बार गैरपारंपरिक ढंग से बजट के काफी बाद जारी किया गया. यह नोटबंदी, वस्तु एवं सेवा कर यानी जीएसटी के लागू होने और कृषि संकट के बाद अर्थव्यवस्था की स्थिति पर भारतीय रिजर्व बैंक और वित्त मंत्रालय के औपचारिक पक्ष की कमी को पूरा करने वाला है. इस खंड में आंकड़ों को पारदर्शी ढंग से पेश किया गया है. यह सराहनीय काम है क्योंकि इससे वैकल्पिक व्याख्या में मदद मिलेगी. आंकड़ों को इलेक्ट्रॉनिक तौर पर जारी करने का निर्णय भी प्रशंसनीय है. हालांकि, वैकल्पिक व्याख्या अर्थव्यवस्था की हताशाजनक तस्वीर पेश करती है. आर्थिक समीक्षा उस आर्थिक विचारधारा से प्रेरित है जिसके सुधार एजेंडे में समावेशी सोच नहीं है.

जीएसटी के फायदों का चित्रण और महंगाई का विश्लेषण बहुत अच्छे ढंग से किया गया है. वैश्विक स्तर पर कच्चे तेल को लेकर जो स्थिति बन रही है, उसमें आने वाले दिनों में इसके दाम कम रहने के आसार हैं. वैकल्पिक स्रोतों से बनने वाली बिजली की कीमतें भी कम रहने से बिजली की दरों में बढ़ोतरी के आसार नहीं हैं. घरेलू खाद्य कीमतों में भी कमी बनी हुई है. न्यूनतम समर्थन मूल्य को तार्किक बनाने और पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में हुई बंपर पैदावार से अनाज उत्पादन में स्थिरता बनी हुई है. खाद्य प्रबंधन में यही स्थिति बनी रहेगी, इस बारे में अभी कुछ नहीं कहा जा सकता. पहले भी हमने कुछ मौकों पर देखा है कि सरकारी भंडारों से अनाजों को खुले बाजार में उतारना पड़ा है, क्योंकि इन्हें

रखने का बोझ अधिक पड़ रहा था. समीक्षा में कहा गया है कि आने वाले दिनों में खाद्य प्रबंधन ठीक रहने की उम्मीद है.

समीक्षा में किसानों की कर्ज माफी के दूरगामी परिणामों की भी चर्चा की गई है. उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पंजाब और तमिलनाडु ने कर्ज माफी की घोषणा की है. समीक्षा में माना गया है कि दूसरे राज्य भी इसी रास्ते पर जाएंगे और कुल मिलाकर 2.2 से 2.7 लाख रुपये की कर्ज माफी हो सकती है. केन्द्र सरकार ने हालांकि साफ कर दिया है कि कर्ज माफी का आर्थिक बोझ राज्यों को खुद ही वहन करना होगा. समीक्षा में चेतावनी दी गई है कि अगर सभी राज्यों ने ऐसा किया तो सकल मांग में 1.1 लाख करोड़ रुपये की कमी आ जाएगी और जीडीपी को 0.7 फीसदी का नुकसान होगा. इसे कोरी कल्पना ही कहा जा सकता है.

कुछ क्षेत्रों को लेकर समीक्षा का विश्लेषण निराशाजनक है. पहली चिंता तो यह है कि पिछले दो सालों में अच्छी बारिश और पैदावार के बावजूद किसानों की स्थिति खराब हुई है. किसानों की आमदनी की अनिश्चितता बनी हुई है. उनके कर्जों में अधिकांश हिस्सा स्थानीय साहूकारों का होता है, फिर भी इन समस्याओं को दूर करने के लिए कुछ नहीं किया गया.

समीक्षा में नोटबंदी के अल्पकालिक नुकसान और दीर्घकालिक फायदों का जिक्र भी किया गया है. हमें यह बताया गया कि नॉमिनल जीडीपी में नोटबंदी के बाद तेजी आई है. यह आश्चर्यजनक है कि इतने गंभीर दस्तावेज में इस बात का जिक्र नहीं है कि नॉमिनल मामले में हर क्षेत्र नोटबंदी से अछूता दिखा. चाहे वह लोक प्रशासन हो, रक्षा हो या अन्य सेवाएं हों, सब जगह उछाल दिखा. विनिर्माण, निर्माण, व्यापार और आर्थिक क्षेत्रों में नोटबंदी का नकारात्मक असर दिखा. अनौपचारिक क्षेत्र पर नोटबंदी के असर का विश्लेषण करते हुए समीक्षा में दोपहिया वाहनों की बिक्री और रोजगार गारंटी योजना के तहत काम की बढ़ी मांग का जिक्र किया गया है. अधिक रोजगार की मांग दबाव का संकेतक तो है लेकिन दोपहिया वाहनों की बिक्री के आंकड़े सही संकेतक नहीं हैं.

सरकारी खर्चों और शिक्षा व स्वास्थ्य क्षेत्र में निवेश पर भी जो तस्वीर समीक्षा में पेश की गई है, वह भारत की जरूरतों के अनुकूल नहीं है. वह मानव पूंजी के मामले में काफी पीछे है. इसकी वजह सामाजिक बुनियादी ढांचे में होने वाला कम निवेश है. समाज की क्रय शक्ति तब बढ़ती है, जब सरकारी खर्चे गरीबों और मध्य वर्ग की जरूरतों को पूरा करने के लिए होते हैं. आर्थिक विकास की धारा में सिर्फ आपूर्ति पक्ष पर ध्यान दिया जा रहा है. मांग पक्ष उपेक्षित है. आर्थिक समीक्षा में ब्रिक्स देशों में शिक्षा और स्वास्थ्य पर निजी खर्च में हुई बढ़ोतरी का जिक्र किया गया है. स्वास्थ्य सेवाओं के लिए भारत में 60 फीसदी पैसा जेब से खर्च होता है, जबकि दूसरे देशों के लिए यह आंकड़ा 10 से 32 फीसदी है. इसका मतलब यह है कि हमारे यहां स्वास्थ्य बीमा का कवरेज कमजोर है. सिर्फ कह देने भर से शिक्षा और स्वास्थ्य पर सरकारी खर्च नहीं बढ़ जाएगा. यह तो तब ही होगा, जब करों का संग्रहण बढ़े और अधिक वित्तीय घाटे की जोखिम उठाने की स्थिति बने. पिछले 30 सालों से सुधार के नाम पर जो चल रहा है, उसमें अपर्याप्त सरकारी खर्च स्पष्ट तौर पर यह जाहिर करता है कि गरीबों की जरूरतों की अनदेखी लगातार की जा रही है. ■

(साभार : इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली)

feedback@chauthiduniya.com

सत्ताधारियों ने पुलिस की तरक्क़ी-तैनाती को बना लिया है कमाई का धंधा

घूस लेकर कब तक करेंगे प्रमोशन!

आउट ऑफ टर्न तरक्क़ी पर थी पाबंदी, सपा सरकार ने चोर रास्ते से निकाला था उपाय

विवादास्पद आदेश के जरिए 990 पुलिसकर्मियों को दे दिया था आउट ऑफ टर्न प्रमोशन

डीजीपी जैन ने अखिलेश सरकार को ऐसा करने से मना किया था, लौटा दिया था प्रस्ताव

सीएम के साथ-साथ वरिष्ठ मंत्री अहमद हसन भी पुलिस महानिदेशक पर दे रहे थे दबाव

नेताओं का अंगरक्षक बनने के लिए पुलिस में मची है होड़, कानून व्यवस्था पर बुरा असर

कर्तव्यपरायण पुलिसकर्मियों में भीषण असंतोष, अब हाईकोर्ट ही उनका एकमात्र सहारा

प्रभात रंजन दीन

हाईकोर्ट से लगी रोक के बावजूद राज्य सरकार ने चोर-दरवाजे से एक फरमान निकाला और अपने चहेते पुलिसकर्मियों को आउट ऑफ टर्न तरक्की दे दी. यह संख्या एक दो नहीं, पूरे 990 है. इस शासनादेश को सरकारी अधिसूचना के बतौर गजट में प्रकाशित नहीं किया गया. उसे गुपचुप लागू कर दिया गया. मतलब सधने के बाद सरकार ने उस गैर-संवैधानिक फरमान को दबा दिया. ऐसा करके यूपी सरकार ने पूरे पुलिस संगठन को तो झांसा दिया ही, अदालत से भी गंभीर छल किया. हाईकोर्ट के निर्देश पर यूपी पुलिस में आउट ऑफ टर्न प्रमोशन पर रोक लागू है. तत्कालीन समाजवादी सरकार के घपले-घोटालों की लंबी फेहरिस्त में शुमार यह एक ऐसी आपराधिक करतूत है, जिसके साजिशी पहलू को पहली बार 'चौथी दुनिया' उजागर कर रहा है. इसपर सरकार और अदालत द्वारा संज्ञान लिया जाना जरूरी है, यदि इसे वह अपना नैतिक दायित्व समझे. बड़ी तादाद में पुलिसकर्मियों और अधिकारियों से हुई बातचीत के बाद यह साफ हुआ है कि सरकारी रवैये से प्रदेश के पुलिस संगठन में भीषण असंतोष व्याप्त है. पुलिस समुदाय राजनीतिक, जातिगत और पूंजीगत कई खेमों और गुटों में बंट चुका है. इसका असर कानून व्यवस्था पर दिख रहा है और आने वाले दिनों की विकृत दशा का संकेत दे रहा है.

बसपा के भ्रष्टाचार को बेच कर सपा सरकार में आई थी, पर सत्ता मिलते ही बसपा के सारे कुकृत्य भूल गई. वह बसपा के उपकार का बदला था, क्योंकि मायावती ने मुलायम-काल के भ्रष्टाचार को ताक पर रख दिया था. उसी तरह सपा के भ्रष्टाचार भुना कर भाजपा सत्ता में आई, लेकिन सरकार में आते ही वह सपाई भ्रष्टाचार से भाईचारा दिखाने लगी. भाजपा किस उपकार का सपा को फल दे रही है? दरअसल, भ्रष्टाचार के मसले पर सारे राजनीतिक दलों में परस्पर समझदारी है. इसीलिए जिसे सत्ता मिलती है, वह बेखौफ खाता है. एक दूसरे का विरोध कर आम नागरिकों को बेवकूफ बनाना और सत्ता हासिल करके एक-दूसरे का पाप भूल जाना सियासी चलन बन गया है. योगी आदित्यनाथ के मुख्यमंत्री बने आधा वर्ष से ऊपर हो गए, लेकिन इस दरम्यान सपा सरकार के घोटालों में से कोई भी एक मामला ठोस कानूनी शक्ल नहीं ले पाया. केवल एक-दो जांचों का ऐलान भर हुआ. समाजवादी पार्टी के अखिलेश-कालीन शासन में गोमती रिवर फ्रंट घोटाला, एक्सप्रेस हाई-वे घोटाला, साइबर सिटी घोटाला, पुलिस भर्ती घोटाला, यश भारती पुरस्कार घोटाला, आयोगों के अध्यक्षों और आयुक्तों के चयन का घोटाला, जातिवाद घोटाला, पीसीएस चयन घोटाला, जनेश्वर मिश्र पार्क निर्माण घोटाला, खनन घोटाला, एम्बुलेंस घोटाला, यादव सिंह संरक्षण घोटाला, किसानों के गन्ना बकाये के भुगतान का घोटाला, ऊर्जा घोटाला जैसे तमाम घोटाले हुए जिन पर सख्त कार्रवाई का नारा और आश्वासन देती हुई भाजपा सत्ता तक आई, लेकिन सत्ता मिलते ही उसे सपा के घोटाले याद नहीं रहे. फिर पांच वर्ष इसी तरह बीत जाएंगे.

अखिलेश यादव के कार्यकाल में एक नायाब घपला हुआ था, जिसकी तरफ 'चौथी दुनिया' आपका ध्यान दिला रहा है. अखिलेश सरकार में पुलिस-प्रमोशन का घोटाला बड़े ही शातिर तरीके से अंजाम दिया गया था. सपा सरकार की इस हरकत से पूरी यूपी पुलिस राजनीतिक और जातिगत कई खेमों में बंट गई है. जो कर्तव्य-परायण पुलिस वाले हैं, वे अल्पमत में हैं और खुद को अनाथ समझ रहे हैं. पांच वर्षों के शासनकाल में समाजवादी पार्टी ने यूपी पुलिस में जातिवादी भर्तियां करके, खेमेबाजियां करके, राजनीतिक पूर्वाग्रह और घूस-आग्रह से तरक्की और तैनातियां देकर पुलिस संगठन को इतना कमजोर कर दिया है कि इसका असर कानून व्यवस्था पर साफ-साफ दिख रहा है. पक्षपातवादी सरकार के कारण पुलिस का नैतिक-मनोबल इतना नीचे गिर चुका है कि अपराध की घटनाओं में भी पुलिस को सपा और गैर सपा, पूंजी-सम्पन्न और पूंजी-विपन्न का भेद दिखता है. इसी भेदभाव पर पुलिस की कार्रवाई चलती है.

अंगरक्षकों का खास गुट बना कर उसमें शामिल पुलिसकर्मियों को अनाप-शनाप तरीके से आउट ऑफ टर्न तरक्की देने में समाजवादी पार्टी की सरकारों को विशेषज्ञता हासिल रही है. पुलिसकर्मियों को तरक्की देने के सपा सरकार के बेजा तौर-तरीकों को देखते हुए ही इलाहाबाद हाईकोर्ट ने इस पर रोक लगा दी थी. हाईकोर्ट के आदेश पर राज्य सरकार को इस पाबंदी के बारे में बाकायदा अधिसूचना जारी करनी पड़ी थी. लेकिन कानून को ठेंगे पर रखने वाली समाजवादी सरकार के मुखिया अखिलेश यादव मुलायम सिंह के जमाने के 32 अंगरक्षकों और अपने जमाने के 42 अंगरक्षकों को मर्यादा लांघ कर तरक्की देने पर आमादा थे. सत्ता गलियारे के सूत्र बताते हैं कि मुख्यमंत्री सचिवालय की प्रमुख सचिव अनीता सिंह और गृह विभाग के सचिव मणि प्रसाद मिश्र ने मिल कर ऐसा तिकड़म बुना कि अखिलेश और मुलायम खुश हो जाएं और कारगुजारी करने वाले अफसर भी सराबोर हो जाएं. शासन के इन स्वनामधन्य अफसरों ने मुलायम और अखिलेश के चहेते अंगरक्षकों को आउट ऑफ टर्न तरक्की देने के लिए कुल 990 पुलिसकर्मियों की लिस्ट तैयार की, जिनमें कान्सटेबल से लेकर दारोगा और इन्सपेक्टर तक शामिल थे. अखिलेश सरकार ने इन सबको इनकी नियुक्ति की तारीख से तरक्की दे दी और इन्हें बाकायदा संवर्गीय (कैडर) स्तर में स्थापित कर दिया. आउट ऑफ टर्न प्रमोशन (ओओटीपी) प्रक्रिया के तहत पुलिसकर्मियों को मिलने वाली तरक्की गैर-संवर्गीय और तदर्थ (एड्हॉक) होती है. लेकिन अखिलेश सरकार ने नियम-कानून की सारी हदें पार कर दीं. 23 जुलाई 2015 को जारी फरमान के जरिए सरकार ने न केवल हाईकोर्ट की पाबंदी लांघी, बल्कि पुलिस अधिकारियों-कर्मचारियों की सेवा नियमावली को भी ताक पर रख दिया. इस सरकारी फरमान का कोई गजट-नोटिफिकेशन भी नहीं किया गया. तकरीबन एक वर्ष बाद ही 11 जुलाई 2016 को शासन ने फिर एक 'विज्ञप्ति' जारी कर 94 इन्सपेक्टरों को तरक्की देकर डीएसपी बनाए जाने की मुनादी कर दी. यह 'विज्ञप्ति' भी सरकारी गजट में प्रकाशित नहीं की गई. अखिलेश सरकार के इन आदेशों को गृह विभाग के अधिकारी पूर्ण रूप से राजनीतिक बताते हैं, क्योंकि तब प्रदेश में विधानसभा चुनाव की तैयारियां जोर-शोर से शुरू हो गई थीं और सपा सरकार पूरे पुलिस संगठन को सपाई कलेवर देकर ताकतवर बनने के जतन में लगी थी. इसीलिए चुन-चुन कर सपा समर्थक पुलिसकर्मियों और अधिकारियों को तरक्की दी जा रही थी और उन्हें महत्वपूर्ण जगहों पर तैनात किया जा रहा था.

चुन-चुन कर तरक्की देने के तमाम उदाहरण सामने हैं. रवींद्र कुमार सिंह, निवाज अहमद, परमेंद्र सिंह, भारत सिंह, जगदीश यादव, सदानंद सिंह, अशोक कुमार वर्मा जैसे कई नाम हैं, जिन्हें सपा सरकार की कृपा से इन्सपेक्टर से डीएसपी बनाया गया. जगदीश यादव 1990 में यूपी पुलिस में सिपाही के पद पर भर्ती हुए थे. उनकी पहली पोस्टिंग फैजाबाद के रौनाही थाने में हुई थी. मुख्यमंत्री सुरक्षा समूह में शामिल हो जाने के कारण उनकी तरक्की-यात्रा इतनी तीव्र गति से हो पाई. इसी तरह अमौसी एयरपोर्ट पर तैनात रहे दारोगा सदानंद सिंह मुलायम और अमर सिंह का पैर छूते-छूते डीएसपी बन गए. आउट ऑफ टर्न तरक्की के लिए एसपी की तरफ से लिखा जाने वाला दृष्टांत (साइटेशन) जरूरी होता है. समस्या यह खड़ी हुई कि कोई एसपी साइटेशन लिखने के लिए तैयार नहीं था. आखिरकार गोंडा के तत्कालीन एसपी के साइटेशन पर उन्हें डीएसपी बनाया गया. इसी तरह तब के ताकतवर सपा नेता अमर सिंह के सुरक्षाकर्मी रहे चमन सिंह चावड़ा को भी डीएसपी के पद पर तरक्की मिली. चावड़ा के लिए लिखे गए साइटेशन को पुलिस महकमे में चुटकुले के बतौर पेश किया जाता है. उनके साइटेशन में लिखा गया कि अदम्य साहस और शौर्य का प्रदर्शन करते हुए उन्होंने फिल्म अभिनेत्री जया प्रदा को सुरक्षा प्रदान की. अमर सिंह के अंगरक्षक को जया प्रदा की सुरक्षा के लिए आउट ऑफ टर्न तरक्की दी गई. यह चुटकुला ही तो है. इसी तरह अशोक कुमार वर्मा को घोर सपाई होने और मुलायम अखिलेश दोनों के शासनकाल में मुख्यमंत्री की प्रमुख सचिव रहीं अनीता सिंह का करीबी होने के कारण तरक्की मिली. तरक्की प्रकरण में अशोक कुमार वर्मा की अतिरिक्त-सक्रियता भी पुलिस महकमे में चर्चा का विषय है.

तत्कालीन मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ने पिता मुलायम के साथ-साथ बाद उनके भी खास अंगरक्षक रहे शिव कुमार यादव को प्रमोट करने के लिए नैतिकता और वैधानिकता की क्रीज़ से बाहर हटकर बैटिंग की. उन्होंने गृह विभाग के जरिए एक आदेश जारी करा कर 15 मार्च 2013 को शिव कुमार यादव को एडिशनल एसपी के पद पर तरक्की दे दी थी. मुलायम ने अपने पहले कार्यकाल में शिव कुमार को दारोगा से इन्सपेक्टर बना दिया था. मुलायम के दूसरे कार्यकाल में शिव कुमार डीएसपी बनाए गए और अखिलेश ने अपने कार्यकाल में उन्हें एएसपी बना दिया. आउट ऑफ टर्न प्रमोशन के बेजा इस्तेमाल के जरिए 15 वर्ष के करियर में इतना भारी उछाल पुलिस संगठन में चर्चा और नकल दोनों का विषय है. इसका सीधा असर

(शेष पृष्ठ 11 पर)

जब डीजीपी जैन ने लौटा दिया था शासन का प्रस्ताव

उत्तर प्रदेश के पुलिस महानिदेशक रहे एके जैन ने मुख्यमंत्री अखिलेश यादव के अंगरक्षकों की टोली के 42 पुलिसकर्मियों को आउट ऑफ टर्न प्रमोशन देने के शासन के प्रस्ताव को नियमावली का हवाला देकर वापस लौटा दिया था. सपा सरकार के तत्कालीन मंत्री और विधान परिषद में नेता सदन अहमद हसन ने भी डीजीपी को अलग से पत्र लिख कर आउट ऑफ टर्न प्रमोशन के आधार पर उन 42 पुलिसकर्मियों का वरिष्ठता क्रम निर्धारित करने के लिए दबाव डाला था. तत्कालीन पुलिस महानिदेशक ने गृह विभाग के प्रमुख सचिव को बाकायदा पत्र (संख्या: डीजी-चार- 119 (11) 2014 दिनांक: 22 मई 2015) लिख कर बताया था कि आउट ऑफ टर्न प्रमोशन संवर्गीय (कैडर) पद के रिक्त स्थान पर ही किया जा सकता है. उस प्रमोशन को नियमानुसार नि:संवर्गीय (एक्स-कैडर) माना जाएगा और वरिष्ठता निर्धारण में उसका लाभ नहीं मिलेगा. जैन ने नियमों का हवाला देते हुए शासन को आधिकारिक तौर पर यह भी जानकारी दी थी कि आउट ऑफ टर्न प्रमोशन दिए जाने के बावजूद सम्बद्ध पुलिसकर्मी की वरिष्ठता का क्रम उसके मूल पद से ही निर्धारित होता है और उसका नियमित (रुटीन) प्रमोशन भी उसी मूल पद के मुताबिक होता है न कि आउट ऑफ टर्न प्रमोशन वाले पद से. डीजीपी ने कहा था कि आउट ऑफ टर्न प्रमोशन को आधार बना कर वरिष्ठता-क्रम का निर्धारण करने की शासन की कई कोशिशें हाईकोर्ट के निर्देश पर पहले भी खारिज की जा चुकी हैं, लिहाजा हाईकोर्ट के निर्देश और निर्धारित प्रावधानों के आलोक में ही संदर्भित पुलिसकर्मियों की वरिष्ठता का निर्धारण किया जाना उचित होगा. पुलिस महानिदेशक एके जैन के इस पत्र से अखिलेश सरकार सकते में आ गई. सरकार को यह एहसास हो गया कि इस मसले में सरकार ने कोई हरकत की तो डीजीपी का वैधानिक डंडा इस प्रयास को आगे नहीं बढ़ने देगा. लिहाजा, अखिलेश सरकार ने जैन के जाने तक इंतजार करना ही बेहतर समझा. 30 जून 2015 को एके जैन के रिटायर होते ही सरकार फिर से हरकत में आ गई. चोर दरवाजे से रास्ता तलाशा जाने लगा और जैन के रिटायर हुए एक महीना भी नहीं बीता था कि 23 जुलाई 2015 को 990 पुलिसकर्मियों के आउट ऑफ टर्न प्रमोशन और वन-टाइम वरिष्ठता निर्धारण का गैर-कानूनी फरमान जारी कर दिया गया. फिर करीब साल भर बाद 11 जुलाई 2016 को अखिलेश सरकार ने 94 इन्सपेक्टरों को तरक्की देकर डीएसपी बनाए जाने की 'विज्ञप्ति' जारी कर दी. सरकार की इन हरकतों से सरकार का अपराध-भाव स्पष्ट हो गया. अखिलेश यादव ने अपने बेजा आदेश को बिना किसी व्यवधान के लागू कराने के लिए एके जैन के जाने के बाद विवादास्पद जगमोहन यादव को डीजीपी बनाया. जगमोहन यादव एक जुलाई 2015 को डीजीपी बने और 23 जुलाई 2015 को शासन का विवादास्पद आदेश जारी हो गया. ■

घूस लेकर कब तक करेंगे प्रमोशन!

पृष्ठ 10 का शेष

पुलिस के काम और प्रतिबद्धता पर पड़ रहा है.

गृह विभाग के ही एक अधिकारी कहते हैं कि 990 पुलिसकर्मियों को तरक्की देने और उसमें से 94 इन्सपेक्टरों को डीएसपी बनाए जाने के लिए जारी किया गया आदेश पूरी तरह गैर-कानूनी है. इस आदेश से पुलिस महकमे के सभी कर्मचारियों का वरिष्ठता-क्रम छिन्न-भिन्न हो गया है. सीनियर जूनियर हो गए और जूनियर अपने सीनियर के माथे पर बैठ गया. पुलिस के कामकाज और अनुशासन पर इसका बहुत बुरा असर पड़ रहा है. जिन पुलिसकर्मियों और अधिकारियों को इस फरमान के जरिए प्रमोशन मिला वे अब पुलिस संगठन में सपा के एजेंट की तरह काम कर रहे हैं. उक्त अधिकारी ने बताया कि प्रदेश सरकार ने मनमाने तरीके से इन्सपेक्टरों का वरिष्ठता-क्रम बनाया और सुप्रीम कोर्ट के नौ मई 2002 के फैसले को भी ताक पर रख दिया. वरिष्ठता-क्रम और 23 जुलाई 2015 को जारी तरक्की-आदेश दोनों ही यूपी पुलिस उप-निरीक्षक एवं निरीक्षक (नागरिक पुलिस) सेवा नियमावली-2015 का सरासर उल्लंघन है. इन्सपेक्टरों (निरीक्षकों) की तरक्की के आदेश में राज्य सरकार ने बड़े शातिराना तरीके से निरीक्षकों की भर्ती के वर्ष का कॉलम गायब कर दिया और इसकी आड़ लेकर मनमाने तरीके से निरीक्षकों के नाम भर दिए. इससे वरीयता-क्रम गड्डमड्ड हो गया. किसी में ट्रेनिंग का वर्ष, बैच नंबर और प्रमोशन का वर्ष अंकित है, तो कई में प्रमोशन का वर्ष ही गायब कर दिया गया है. सेवा नियमावली के प्रावधानों को दरकिनार कर वरिष्ठता सूची में बैकलॉग वाले 119 नाम भी ठूंस दिए गए. गृह विभाग के अधिकारी ने कहा कि सरकार की ये सारी हरकतें गैर-कानूनी हैं और हाईकोर्ट से खारिज होने लायक हैं, इसीलिए

अनीता सिंह, तत्कालीन प्रमुख सचिव

मणि प्रसाद मिश्रा, तत्कालीन गृह सचिव

इस मामले को लंबे अर्से तक लटकाए रखने की कोशिशें चल रही हैं, ताकि सरकार के इस कुकृत्य का विरोध करने वाले सारे पुलिस अधिकारी रिटायर हो जाएं और उनकी कानूनी लड़ाई किसी नतीजे तक नहीं पहुंच पाए.

समाजवादी पार्टी के नेताओं ने आउट ऑफ टर्न प्रमोशन को अपनी सियासत और कमाई दोनों का धंधा बना लिया था. इसी वजह से हाईकोर्ट ने जनवरी 2014 में इस पर रोक लगा दी थी. हाईकोर्ट के निर्देश पर राज्य सरकार को पुलिस में आउट ऑफ टर्न प्रमोशन की प्रक्रिया पर रोक लगाने का सात जून 2014 को शासनादेश जारी करना पड़ा था. पुलिस महकमे में आम चर्चा है कि इस पाबंदी से सपा नेताओं का जब धंधा बंद हो गया तब चोर दरवाजे से इसका जुगाड़ निकाला गया और कॉन्सटेबल, दारोगा और इन्सपेक्टर मिला कर 990 पुलिसकर्मियों को तरक्की दे दी गई. इसके पीछे ठोस-पार्टी-लाइन और ठोस-धन की ठोस-भूमिका रही. एक पुलिस अधिकारी ने कहा कि चोर रास्ते से तरक्की के लिए पुलिसकर्मियों ने यह ठोस-धन जनता से ही तो वसूल कर चुकाए होंगे. आप इतने से ही समझ लें कि डीएसपी बनने की लाइन में खड़े 94 इन्सपेक्टरों ने केस लड़ने के लिए एलपी मिश्रा, एसके कालिया, जयदीप नारायण माथुर, अनूप त्रिवेदी जैसे महंगे वकीलों को पिछले एक वर्ष से नियुक्त (इन्गेज) कर रखा है. इनमें से एक वकील की एक सुनवाई पर इजलास में खड़े होने की फीस साढ़े तीन लाख रुपए है, दूसरे की फीस तीन लाख रुपए और तीसरे-चौथे वकील की फीस दो लाख रुपए है. इसके अलावा याचिका दाखिल करने वाले को याचिका वापस ले लेने के लिए करोड़ों रुपए का ऑफर अलग से दिया जा रहा है. कहां से आ रहे हैं, इतने ढेर सारे पैसे? प्रदेश की आम जनता इस सवाल का जवाब जानती है, क्योंकि भुक्तभोगी वही है.

उल्लेखनीय है कि आउट ऑफ टर्न प्रमोशन से इंस्पेक्टरों को डीएसपी बनाए जाने के फैसले पर भी हाईकोर्ट की भृकुटियां तनी हुई हैं. कमल सिंह यादव की याचिका पर सुनवाई के क्रम में हाईकोर्ट ने राज्य सरकार को आड़े हाथों लिया. हाईकोर्ट राज्य सरकार के उस शासनादेश पर अपनी सहमति की मुहर लगा चुकी है, जिसमें आउट ऑफ टर्न प्रमोशन देने के नियम को समाप्त किए जाने का निर्णय लिया गया था. इसके पूर्व वर्ष 2014 में हाईकोर्ट ने आउट ऑफ टर्न प्रमोशन की प्रक्रिया को गैर-कानूनी और गैर-वाजिब करार दिया था. उत्तर प्रदेश पुलिस में हेड कांस्टेबल पद पर तरक्की पाए साढ़े आठ हजार से अधिक कांस्टेबलों के खिलाफ भी हाईकोर्ट में याचिका लंबित है. आरोप है कि सरकार ने पुलिस भर्ती नियमावली का उल्लंघन करते हुए योग्यता और वरीयता को ताक पर रख कर जूनियरों को प्रमोशन दे दिया. वरिष्ठ कांस्टेबलों को प्रमोशन से वंचित कर दिया गया. प्रमोशन के लिए 12 हजार 492 कांस्टेबल योग्यता सूची में थे. वरिष्ठता के आधार पर इनमें से ही हेड कांस्टेबल बनाया जाना था. लेकिन मनमाने तरीके से तरक्की दे दी गई.

पुलिसकर्मियों के रुटीन प्रमोशन पर कभी ध्यान ही नहीं दिया

अपने चाटुकारों और समर्थकों को आउट ऑफ टर्न प्रमोशन की आपाधापी मचाने वाले सपाई सत्ताधारियों ने पुलिसकर्मियों के सालाना रुटीन प्रमोशन पर कभी ध्यान नहीं दिया. इस तरफ बसपा सरकार ने भी कभी ध्यान नहीं दिया. आप आश्चर्य करेंगे कि 1980-81, 81-82 और 82-83 बैच के उप निरीक्षकों की सालाना तरक्की के लिए आज तक केवल तीन बार डीपीसी हुई. पिछले 37 वर्षों में उप निरीक्षकों (दारोगाओं) के प्रमोशन के लिए महज तीन बार डिपार्टमेंटल प्रमोशन कमेटी (डीपीसी) की बैठक का होना, सरकारों की घनघोर अराजकता की सनद है. 1982 बैच के उप निरीक्षकों के रुटीन प्रमोशन के लिए 15 साल बाद 1997 में डीपीसी हुई. उसके आठ साल बाद वर्ष 2005 में डीपीसी बैठी और फिर आठ साल बाद वर्ष 2013 में डीपीसी हुई. सत्ता के शीर्ष आसनों पर बैठे नेता तरक्की की दुकान खोले बैठे रहे और घूस लेकर तरक्कियां बेचते रहे. विडंबना यह है कि 80-81 और 81-82 बैच के उप निरीक्षक-निरीक्षकों को वर्ष 2007 और 2008 से एडिशनल एसपी का वेतन मिल रहा है, लेकिन सरकार ने उनका रुटीन प्रमोशन नहीं होने दिया. रुटीन प्रमोशन से वंचित ऐसे अधिकारियों की संख्या तकरीबन दो हजार है. ■

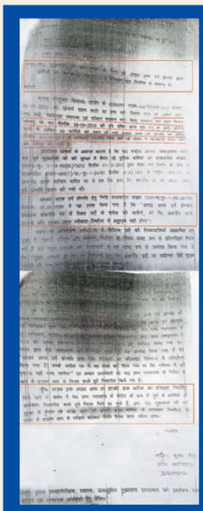
तत्कालीन डीजीपी एके जैन ने लौटा दिया था अखिलेश सरकार का प्रस्ताव. इसी पत्र में वरिष्ठ मंत्री अहमद हसन की सिफारिश का भी जिक्र है

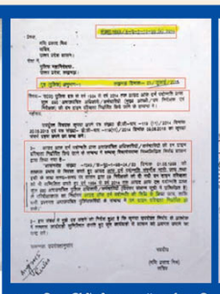
990 पुलिसकर्मियों को आउट ऑफ टर्न तरक्की देने के लिए जारी कर दिया गैर-कानूनी फरमान

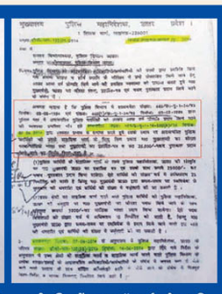
यूपी पुलिस में आउट ऑफ टर्न प्रमोशन की प्रक्रिया बंद किए जाने का सरकारी आदेश

उत्तर प्रदेश पुलिस की वेबसाइट से 990 पुलिसकर्मियों को आउट ऑफ टर्न तरक्की देने का विवादास्पद फरमान नदारद

दलाल के जरिए रिश्वत लेकर तरक्की देते थे नेता-नौकरशाह

आपको थोड़ा फ्लैश-बैक में लेते चलें. कुछ ही अर्सा पहले ऊंची पहुंच वाले एक दलाल ने घूस लेकर पुलिस वालों को तरक्की देने के नेताओं-नौकरशाहों के गोरखधंधे का पर्दाफाश किया था. दलाल ने कुछ बड़े नेता और बड़े नौकरशाहों का नाम लिया था. लेकिन नेता का नाम दबा दिया गया. हालांकि रिश्वत लेकर तरक्की दिलाने वाले उस सपा नेता के बारे में पुलिस के लोग अच्छी तरह जानते हैं. पकड़े जाने के पहले तक वह दलाल नहीं, बल्कि सपा नेता शैलेंद्र अग्रवाल के रूप में जाना जाता था और सत्ता के शीर्ष गलियारे तक उसकी सीधी पहुंच थी. मोटी रकम लेकर पुलिसकर्मियों को तरक्की देने के धंधे में उस दलाल ने करोड़ों रुपए कमचश, तो आप समझ सकते हैं कि सपा नेता और नौकरशाहों ने कितनी रकम एंठी होगी. इसमें दो पुलिस महानिदेशकों एसी शर्मा और एएल बनर्जी का नाम आया, लेकिन दूसरे नाम दब गए. दारोगाओं के प्रमोशन में प्रत्येक से आठ से 10 लाख रुपए लिए जाते थे. इस तरह सपा सरकार के कार्यकाल में बड़ी तादाद में दारोगाओं को इन्सपेक्टर के पद पर तरक्की मिली. तरक्की के धंधे में शैलेंद्र अग्रवाल ही बिचौलिया रहता था. केवल शैलेंद्र के माध्यम से ही प्रदेश के करीब 40 दरोगाओं को प्रोन्नति देकर इंस्पेक्टर बनाया गया था. जिन दारोगाओं की तरक्की की फाइलें विभिन्न जांचों के कारण रुकी पड़ी थीं, वे फाइलें भी घूस के दम पर चल पड़ीं और दारोगाओं को प्रमोशन मिल गया. 40 दारोगाओं की तरक्की में करोड़ों का लेनदेन हुआ और नेता से लेकर अफसर तक को हिस्सा मिला. इस धंधे के नेटवर्क में कई आईपीएस और आईएएस अफसर शरीक थे, लेकिन उनके नाम दब गए और शैलेंद्र को जेल में ठूंस दिया गया.

सियासत से नहीं, पुलिस का मनोबल मज़बूत करने से रुकेगा अपराध

सपा और बसपा दोनों ने ही यूपी पुलिस को अपने-अपने राजनीतिक रंग में रंगने की कोशिश की. इसमें सपा अधिक तेज निकली, जिसने भर्तियां करके और तरक्कियां देकर पुलिस में अपनी 'कतार' खड़ी की. बसपा ने भी ऐसा किया, लेकिन कम किया. 2012 के विधानसभा चुनाव के पहले पुलिस में राजनीतिक-पक्षपात भरने के इरादे से सपा ने सारे पुलिसकर्मियों को उनके गृह जनपदों के नजदीक के जिले में तैनात करने का वादा किया था. सपा ने सरकार बनते ही यह वादा पूरा भी किया, लेकिन बंदायू बलात्कार कांड के कारण इस नियम को निलंबित करना पड़ा. इससे पुलिस में नाराजगी भी फैली. खैर, इस वर्ष के विधानसभा चुनाव के दरम्यान बसपा नेता मायावती ने वही वादा दोहराया और कहा कि बसपा की सरकार बनी तो पुलिसकर्मियों को उनके गृह जिले में तैनाती मिलेगी. इसके अलावा मायावती ने त्यौहारों पर छुट्टी करने करने वाले पुलिसकर्मियों के लिए अलग से नगद भुगतान की व्यवस्था लागू करने की बात भी कही थी. दूसरी तरफ भाजपा पुलिस के राजनीतिकरण के खिलाफ बोल रही थी. प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने तो यूपी पुलिस के थानों को सपा का कार्यालय तक कह दिया था. मोदी ने यह भी कहा था कि इसमें पुलिस वालों की गलती नहीं, बल्कि सत्ता का दबाव है. अब प्रदेश में भाजपा की सरकार है. प्रदेश के पुलिसकर्मियों के साथ हुई सत्ताई नाइंसाफियों को दूर करने और उनकी सुविधाओं का ख्याल करने की कोई चिंता इस सरकार में भी नहीं दिख रही है. उत्तर प्रदेश की लचर कानून व्यवस्था को लेकर मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की चिंता वाजिब तो है, लेकिन पुलिस का मनोबल मजबूत किए बगैर कानून व्यवस्था मजबूत थोड़े ही हो सकती है!

जांबाज़ रह गए और चाटुकार पा गए आउट ऑफ टर्न तरक्क़ी

आउट ऑफ टर्न तरक्की पाने की निर्धारित शर्त थी साहस, शौर्य, पराक्रम और कर्तव्यपरायणता. खूंखार अपराधियों से निपटने या खुद की जान जोखिम में डाल कर आम लोगों की सेवा करने वाले प्रतिबद्ध पुलिसकर्मियों को आउट ऑफ टर्न तरक्की देने का प्रावधान किया गया था. लेकिन सपा सरकार ने इसे धंधा बना दिया. साहस, शौर्य, पराक्रम और कर्तव्यपरायणता के बजाय घूसखोरी, चाटुकारिता, अवसरवाद और व्यक्तिपूजा ने उसकी जगह ले ली. ऐसे तमाम जांबाज पुलिस अधिकारी और कर्मचारी आउट ऑफ प्रमोशन से वंचित कर दिए गए, जिन्होंने उदाहरणीय शौर्य और पराक्रम दिखाया, लेकिन वे भ्रष्ट, चाटुकार और व्यक्तिपूजक नहीं थे. ऐसे जांबाज पुलिसकर्मियों की सूची भी 'चौथी दुनिया' के पास है, लेकिन उनके नाम हम प्रकाशित नहीं कर रहे हैं, क्योंकि धंधेबाज नेता-नौकरशाह उनका जीना हराम कर देंगे. ■

ऑउट ऑफ टर्न प्रमोशन के बदले विशेष भत्ता देने की योजना पर ग्रहण

ऑउट ऑफ टर्न प्रमोशन पर पाबंदी लगाने के बाद उत्तर प्रदेश के जांबाज पुलिसकर्मियों को विशेष भत्ता देकर पुरस्कृत करने की योजना बनी थी, लेकिन सरकार के विवादास्पद फरमान से यूपी पुलिस की इस विशेष योजना पर ग्रहण लग गया. योजना बनी थी कि साहस और शौर्य दिखाने वाले जांबाज पुलिसकर्मियों को एक हजार रुपए प्रतिमाह का विशेष भत्ता सेवा की अवधि तक दिया जाता रहेगा. इसके साथ ही हर साल 10 पुलिसकर्मियों को विशेष सम्मान के लिए चुन कर उन्हें मुख्यमंत्री प्रशस्ति-पत्र से सम्मानित किए जाने की योजना थी. सराहनीय काम करने वाले 25 पुलिसकर्मियों में से प्रत्येक को 25 हजार रुपए का इनाम दिए जाने की भी योजना बनी थी. लेकिन सारी योजनाएं प्रमोशन के विवादास्पद आदेश के कारण छाया-क्षेत्र में चली गईं.

सब एक-दूसरे का पाप धोने और छुपाने में लगे हैं

जैसा ऊपर कहा कि भ्रष्टाचार के मसले पर सारे राजनीतिक दलों के बीच समझदारी है. जो सत्ता में आता है वह खाता है और पहले खाकर जा चुके को बचाता है. बसपा जब सत्ता में आई तब लोगों को लगा था कि मायावती तो मुलायम को किसी भी हाल में नहीं छोड़ेंगी. सपा के विरोध की तल्खी ने ही 2007 के विधानसभा चुनाव में बसपा को सत्ता की कुर्सी तक पहुंचाया था. बसपा ने जो आश्वासन दिए थे उस अनुरूप कार्रवाई की उम्मीद थी, लेकिन मायावती ने इन उम्मीदों पर पानी फेर दिया. मुलायम काल के ऐतिहासिक खाद्यान्न घोटाले का आखिरकार सत्यानाश ही हो गया. हालांकि मायावती ने 35 हजार करोड़ के खाद्यान्न घोटाले की सीबीआई जांच की सिफारिश की थी, लेकिन उसकी लीपापोती का भी उन्होंने ही रास्ता बना दिया. मुलायम के खाद्यान्न घोटाले को 2-जी स्कैम से बड़ा घोटाला बताया गया था, लेकिन नतीजा कुछ भी नहीं निकला. इसी तरह मुलायम के शासन काल में राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण घोटाला हुआ था. मायावती सत्ता पर आईं तो तकरीबन डेढ़ सौ करोड़ के उस विद्युत घोटाले को दबा कर बैठ गईं. मुलायम काल में हुए पुलिस भर्ती घोटाले की भी जांच और कार्रवाई की तमाम औपचारिकताओं का मायावती ने प्रहसन खेला, लेकिन मुलायम के शासनकाल का बहुचर्चित पुलिस भर्ती घोटाला भी ढाक के तीन पात ही साबित हुआ. वर्ष 2012 में जब समाजवादी पार्टी की सरकार आई तब मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ने बसपाई उपकारों को याद रखा और बुआ के तमाम घोटालों पर पानी डाल दिया. चुनाव के पहले सपा नेता मायावती के तमाम घोटालों को जनता के बीच बेचते रहे, लेकिन सत्ता में आए तो खुद को बेच डालना श्रेयस्कर समझा. मायावती का स्मारक घोटाला, पत्थर घोटाला, पांच हजार करोड़ से भी अधिक का ऊर्जा घोटाला, ताज गलियारा घोटाला, जेपी समूह को हजारों करोड़ का बेजा फायदा पहुंचाने का प्रकरण सब का सब अखिलेश सरकार ने हजम कर लिया. अब भाजपा की सरकार आई तो उसने समाजवादी पार्टी के तमाम घोटालों के साथ ही पांच साल काटने की प्रैक्टिस शुरू कर दी है. मुलायम कालीन पुलिस भर्ती घोटाला उजागर करने वाले पुलिस अधिकारी सुलखान सिंह को डीजीपी बना कर भी भाजपा उन्हें पंगु बनाए हुई है. वर्ष 2007 से पहले मुलायम सिंह के शासनकाल में जो कांस्टेबल भर्ती घोटाला हुआ था, उसके तार सीधे-सीधे शिवपाल यादव से जुड़े थे. रिश्वत लेकर जाति विशेष के अभ्यर्थियों को पुलिस की नौकरी दिए जाने की शिकायतों का अंबार लग गया था. 2007 में सत्ता में आई बसपा सरकार की मुखिया मायावती ने जांच कराने और हड़कंप मचाने के बावजूद पुलिस भर्ती घोटाले को कानूनी अंजाम तक नहीं पहुंचने दिया. भाजपा को भी घपले-घोटालों की पुरानी फाइलें खोलने में कोई रुचि नहीं है. ■

feedback@chauthiduniya.com

बिहार के पश्चिम चम्पारण में स्वर्ण भंडार होने का मिला साक्ष्य

इस क्षेत्र की नदियों में बहता सोना चार-पांच दशक पूर्व ज्यादा चर्चित हुआ था. यहां के थारू लोग जिनके पास आजीविका के दूसरे साधन उपलब्ध नहीं थे, वे इन नदियों के पानी को छानकर सोना का कण इकट्ठा करते थे. ये जानकारी जब क्षेत्र में फैली तो लोगों ने यहां खुदाई कराने की भी मांग की थी. तत्कालीन केन्द्रीय सिंचाई मंत्री केदार पाण्डेय से भी मांग की गई थी कि इसकी जांच कराई जाय कि यहां सोने का खदान तो नहीं है. लेकिन सरकार ने इसकी कोई खोज-खबर नहीं ली. श्री पाण्डेय भी ज्यादा दिनों तक सरकार में नहीं रहे और यह कार्य पूरा नहीं हो सका.

राकेश कुमार

पश्चिमोत्तर बिहार की सीमा पर अवस्थित पश्चिम चम्पारण के सघन वन क्षेत्र के उत्तरी छोर पर पंडई नदी है. पंडई नदी के किनारे ही बसा है भीखनाठोरी. गगनचुंबी शिवालिक पर्वत श्रृंखलाओं, सर्पाकार पहाड़ी सड़कों तथा धूप और चंदन के वृक्षों से घिरे इस क्षेत्र का प्राकृतिक सौंदर्य देखते ही बनता है. लेकिन हाल ही में पता चला है कि प्रकृति ने इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र को अमूल्य सम्पदा भी दी है. विगत दिनों बिहार सरकार के माइन्स विभाग को खोज के दौरान यहां सोने का पहाड़ होने का साक्ष्य मिला है.

दशकों से मिलता रहा है सोना होने का साक्ष्य

माइन्स विभाग की खोज से यहां के लोगों में कोई हैरानी नहीं है, क्योंकि यहां दशकों पहले से ही सोना होने के साक्ष्य मिलते रहे हैं. ये अलग बात है कि कभी भी सरकारी स्तर पर इसकी पड़ताल नहीं की गई. पश्चिम चम्पारण के शिवालिक पर्वतमालाओं से आधा दर्जन से ज्यादा नदियां निकलती हैं. इन नदियों के पानी में स्वर्ण कण मिलते रहे हैं. ये स्वर्ण कण ही इस क्षेत्र के थारू और आदिवासियों के लिए दो जून की रोटी का साधन भी रहे हैं. इस क्षेत्र की नदियों में बहता सोना चार-पांच दशक पूर्व ज्यादा चर्चित हुआ था. यहां के थारू लोग जिनके पास आजीविका के दूसरे साधन उपलब्ध नहीं थे, वे इन नदियों के पानी को छानकर सोना का कण इकट्ठा करते थे. ये जानकारी जब क्षेत्र में फैली तो लोगों ने यहां खुदाई कराने की भी मांग की थी. तत्कालीन केन्द्रीय सिंचाई मंत्री केदार पाण्डेय से भी मांग की गई थी कि इसकी जांच कराई जाय कि यहां सोने का खदान तो नहीं है. लेकिन सरकार ने इसकी कोई खोज-खबर नहीं ली. श्री पाण्डेय भी ज्यादा दिनों तक सरकार में नहीं रहे और यह कार्य पूरा नहीं हो सका. तब जानकारों ने कहा था कि अगर भूगर्भशास्त्रियों से इस जगह की जांच कराई जाए, तो संभव है कि उत्तर बिहार की यह भूमि दक्षिण बिहार (वर्तमान में झारखंड) की तरह साबित हो. अब चार-पांच दशकों के बाद यह संभावना सच होती नजर आ रही है.

खनन एवं भूतत्व विभाग को प्रारंभिक जांच में मिले साक्ष्य

बिहार सरकार के खनन एवं भूतत्व विभाग की प्रारंभिक जांच में इस क्षेत्र में सोना होने का साक्ष्य मिला है. साक्ष्य के आधार पर कहा जा रहा है कि यहां उत्तम श्रेणी के स्वर्ण 'प्लेसर गोल्ड' का भंडार हो सकता है. इसके बाद सरकारी महकमें में तेजी आई है. लेकिन यह क्षेत्र वन्य प्राणियों के लिए संरक्षित क्षेत्र है. राष्ट्रीय व्याघ्र परियोजना भी इसी क्षेत्र में है. इसके कारण यहां खनन और खोज में अड़चनें आ रही हैं. सरकारी स्तर पर इन बाधाओं को दूर करने का प्रयास किया जा रहा है. कहा जा रहा है कि वन एवं पर्यावरण विभाग की अनुमति के बाद जल्द ही जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया इस क्षेत्र में गहन सर्वेक्षण प्रारंभ करेगा.

सोना छानकर आजीविका चलाते रहे हैं थरूहट के लोग

भारत-नेपाल सीमा से सटे पश्चिम चम्पारण जिले के बगहा, रामनगर और गौनाहा प्रखंड में थारू और उरांव आदिवासियों की बड़ी आबादी है. इस क्षेत्र को थरूहट भी कहा जाता है. यहां के महादेवा जंगल से दोन की तरफ बढ़ने पर 24 जगह पहाड़ी सोनहा नदी पार करनी पड़ती है. इन जगहों पर थारू महिला-पुरुषों का पानी से स्वर्ण कण छानते दिखना आम बात है. यहां की नदियों और इनमें बहने वाले स्वर्ण कणों के बारे में बताते हुए ये आदिवासी कहते हैं कि हिमालय से दक्षिण की ओर बहने वाली भलूही, सोनहा, भपसा, हरहा, कईला, मसान, मछोह और मनौर आदि नदियों की गहराई तथा चौडाई बहुत ही कम है,

ग्रामीणों ने बताया कि सोना छानने की प्रक्रिया भी बहुत जटिल है. छानने के बाद इसे साफ किया जाता है. पहले बालू में से बड़े स्वर्ण कणों को छांट लिया जाता है, फिर सतसाल की लकड़ी की तख्ती पर जंगली पत्तियों का लसलसा लेप लगा कर इस पर स्वर्ण कण मिश्रित बालू को रख कर पानी डाला जाता है. ऐसा करने से बालू अलग हो जाता है. इस तरह से स्वर्णकण अलग कर लिए जाते हैं.

लेकिन इनका प्रवाह बहुत तेज होता है. इन नदियों की तेज धार में रेत के साथ स्वर्ण कण भी प्रवाहित होते रहते हैं. इन नदियों के बालू से स्वर्ण कणों को निकालना बेहद ही मुश्किल काम होता है. लेकिन फिर भी आजीविका के दूसरे साधन उपलब्ध नहीं होने के कारण यहां के थारू दशकों से यही काम करते आ रहे हैं. इसी काम के द्वारा लोग अपना जीविकोपार्जन चलाते हैं. बरसात और बाढ़ के दिनों को छोड़कर पूरे वर्ष यहां के लोग नदियों से स्वर्ण कण निकालने के काम में लगे रहते हैं.

नहीं मिलती क़ीमत, मालामाल हो रहे स्वर्ण व्यवसायी

थारुओं के गांव लक्ष्मीपुर, बैरिया खुर्द, बैरिया कला, कुनई, देवरिया, झझरी, बेलाटांडी आदि के लोगों ने सोना छानने और इसे तैयार कर बेचने की पूरी प्रक्रिया से हमें अवगत कराया. रामनगर प्रखंड के बेतहानी गांव के एक ग्रामीण प्रेमनाथ काजी ने बताया कि वे लोग विगत 25-30 वर्षों से सोना छानने का काम कर रहे हैं और इसी से परिवार का भरण पोषण कर रहे हैं. प्रेमनाथ काजी के अनुसार इस काम में लगे लोग दिन भर में औसतन पांच सौ रुपए का सोना निकाल लेते हैं. ये सोना अच्छी क्वालिटी का है, लेकिन स्थानीय स्वर्णकार सेठ और इनके दलाल धोखाधड़ी कर इन्हें दो-ढाई सौ रुपए से ज्यादा नहीं देते. इससे पहले इन्हें यहां के दबंगो, वन कर्मियों और पुलिस को भी हिस्सा देना पड़ता है. पहले डाकुओं का बोलबाला था, तो एक बड़ा हिस्सा उन्हें भी देना पड़ता था. अगर वन कर्मियों और पुलिस कर्मियों को हिस्सा नहीं दिया जाता, तो ये लोग सोना छानने नहीं देते हैं. ग्रामीणों ने बताया कि सोना छानने की प्रक्रिया भी बहुत जटिल है. छानने के बाद इसे साफ किया जाता है. पहले बालू में से बड़े स्वर्ण कणों को छांट लिया जाता है, फिर सतसाल की लकड़ी की तख्ती पर जंगली पत्तियों का लसलसा लेप लगा कर इस पर स्वर्ण कण मिश्रित बालू को रख कर पानी डाला जाता है. ऐसा करने से बालू अलग हो जाता है. इस तरह से स्वर्णकण अलग कर लिए जाते हैं. यहां भी खरीददारी में बिचौलियों की बड़ी भूमिका होती है. गांव-गांव घूमकर बिचौलिये कम दाम पर स्वर्ण कण खरीद लेते हैं और उसे स्वर्णकारों को ज्यादा कीमत पर बेच देते हैं. ग्रामीण बताते हैं कि कितने साहुकार इन्हीं स्वर्णकणों से करोड़पति बन गए.

बह गया करोड़ों का सोना

स्थानीय ग्रामीण बताते हैं कि अगर सरकार शुरू में ही यहां जांच कराती और खुदाई कराती, तो अब तक कई हजार करोड़ का सोना प्राप्त हुआ रहता. लेकिन सरकारों की उदासिनता के कारण करोड़ो का सोना बह गया. लोग बताते हैं कि ऐसा भी नहीं है कि यहां सोना होने की बात से स्थानीय प्रशासन अनभिज्ञ है. जिला से लेकर प्रखंड और पंचायत स्तर तक के अधिकारी इस बारे में जानते हैं, लेकिन फिर भी वे सरकार तक इसकी जानकारी नहीं पहुंचा सके. बहरहाल, जीएसआई के द्वारा सर्वेक्षण किए जाने की जानकारी के बाद अब यहां का सरकारी महकमा चौकस हुआ है. दूसरी तरफ स्थानीय लोगों को रोजी-रोटी छीन जाने का डर सताने लगा है.

अन्य जगहों पर भी खनिज भंडार होने की संभावना

जानकार बताते हैं कि अगर जांच की जाय तो गया, मुंगेर और राजगीर में भी ऐसे ही स्वर्ण भंडार मिल सकते हैं. रोहतास के सेंदुवार में भी स्वर्ण कणों होने की बात सामने आई थी. वहां हीरा मिलने की भी संभावना जताई गई है. इसे लेकर यहां सर्वे का कार्य भी प्रारंभ हो चुका है. रोहतास में पाइराइट्स भी पाया गया है. कहा जा रहा है कि अगले वर्ष इन स्थानों पर सर्वे का काम शुरू हो सकता है. इसके अलावा गया के ईमामगंज में किमती प्लेटिनम का खान मिला है. यहां जी-4 स्तर का सर्वे कार्य भी पूरा कर लिया गया है. इसके बाद जी-3 स्तर के अन्वेषण का कार्य शुरू किया जाएगा. वहीं भागलपुर के राजगांव प्रखंड में कोयले का बड़ा भंडार मिला है. इस भंडार में 982 मिलियन टन कोयला होने का अनुमान है. जमुई में जीरकॉनियम, टंगस्टन, टीन, लीड, नीकेल और तांबा होने की संभावना है. वहीं कैमूर में टाइटेनियम और नोहट्टा में पोटाश होने का अनुमान है. खनन विभाग और राज्य भूतात्विक कार्यक्रम पर्षद की बैठक में दर्जन भर जिलों में विभिन्न खनिजों के सर्वे और अन्वेषण का निर्णय लिया गया है.■

feedback@chauthiduniya.com

आदित्य सचदेवा हत्याकांड में सज़ा का एलान

बदलेगा सियासी समीकरण!

सुनील सौरभ

बिहार के बहुचर्चित आदित्य सचदेवा हत्याकांड में जदयू की विधान पार्षद मनोरमा देवी के बेटे राकेश रंजन उर्फ रॉकी तथा पति बिन्देश्वरी प्रसाद यादव उर्फ बिन्दी यादव समेत चार को सजा हो चुकी है. राकेश रंजन उर्फ रॉकी ने आदित्य सचदेवा की गोली मारकर हत्या कर दी थी. दरअसल, 7 मई 2016 को रॉकी बोधगया से अपने दोस्तों के साथ एक बर्थडे पार्टी से लौट रहा था, आदित्य सचदेवा की गाड़ी ने उसकी लैंड रोवर को साइड नहीं दी. इसे अपनी तौहीन समझ रॉकी ने आदित्य के साथ हाथापाई शुरू कर दी और झगड़ा बढ़ने पर उसे गोली मार दिया. आदित्य गया के मखलौटगंज निवासी व्यवसायी श्याम सचदेवा का पुत्र था. रॉकी की गिरफ्तारी के लिए पुलिस जब एमएलसी मनोरमा देवी के घर पहुंची, तो वहां से शराब की कई बोतलें भी मिली थीं. इस मामले में भी प्राथमिकी दर्ज की गई थी. शुरुआत में रॉकी और बिन्दी यादव को नामजद अभियुक्त बनाया गया था. लेकिन बाद में मनोरमा देवी को भी प्राथमिकी अभियुक्त बनाकर जेल भेजा गया.

इस मामले में 6 सितम्बर 2017 को गया की निचली अदालत ने एमएलसी मनोरमा देवी के पुत्र रॉकी, एमएलसी के बॉडी गार्ड राजेश कुमार, रॉकी के चचेरे भाई टेनी को आजीवन कारावास तथा बिन्दी यादव को साक्ष्य छुपाने के आरोप में पांच साल की सजा दी. इस फैसले से जहां पीड़ित परिवार राहत तथा न्याय मिलने की बात कह रहे हैं, वहीं दूसरी ओर मनोरमा देवी के परिजन और समर्थक इसे राजनीतिक रूप देकर जातीय सहानुभुति प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं. मनोरमा देवी बिहार विधान परिषद की गया निकाय निर्वाचन क्षेत्र से जदयू की विधान पार्षद हैं. वे पूर्व में भी एक बार इसी क्षेत्र से विधान पार्षद रह चुकी हैं. इनके पति बिन्देश्वरी प्रसाद यादव उर्फ बिन्दी यादव गया जिला परिषद के अध्यक्ष भी रह चुके हैं. बिन्दी यादव 90 के दशक से ही अपराध की दुनिया में सक्रिय रहे हैं. राजद के लालू-राबड़ी शासनकाल में बिन्दी यादव सबसे अधिक चर्चित रहे. बाद में उन्होंने अपनी साफ-सुथरी छवि बनाने की कोशिश की.

मनोरमा देवी तथा इनके परिजनों को उम्मीद थी कि सत्ताधारी दल की जनप्रतिनिधि होने के नाते इन्हें सरकार की ओर से कुछ राहत मिलेगी. लेकिन इस सोच के विपरित बिहार सरकार ने रॉकी को पटना हाईकोर्ट से मिली जमानत को सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दे डाली. फलत: रॉकी की जमानत रद्द कर दी गई. इसी के बाद इस मामले को राजनीति और जातीय समीकरण के हिसाब से जोड़कर देखा जाने लगा. बिहार सरकार ने इस हत्याकांड में स्पीडी ट्रायल का आदेश दे दिया. खुद मुख्यमंत्री नीतीश कुमार गया आए, तो उन्होंने पीड़ित परिवार से मुलाकात की और उन्हें न्याय दिलाने का भरोसा दिलाया. इन्हीं सब बातों ने इस मामले को जातीय राजनीति की ओर मोड़ दिया. इसी बीच बिहार की महागठबंधन की गांठें भी खुल गईं और लालू-नीतीश की राहें अलग हो गईं. नीतीश पुन: एनडीए का हिस्सा बनकर मुख्यमंत्री बने रहे. इसके बाद तो मगध में भी यह बात तेजी से फैल गई कि लालू यादव तथा इनकी जाति के नेताओं पर नीतीश दुर्भावना से प्रेरित होकर कार्रवाई करा रहे हैं और जेल भिजवा रहे हैं. नवालिग से बलात्कार के मामले में जेल में बंद नवादा के राजद विधायक राजबल्लभ यादव को भी हाईकोर्ट से जमानत मिलने के बाद नीतीश कुमार ने अपने अधिकारियों को आदेश दिया था कि वे सुप्रीम कोर्ट जाकर बेल रद्द करवाएं. इन्हीं सब घटनाओं को देखते हुए अब मगध में नीतीश कुमार और इनकी पार्टी जदयू को यादव विरोधी करार दिया जा रहा है. लेकिन जदयू के कुछ यादव नेता इस बात से इंकार कर रहे हैं.

एक स्थानीय नेता का कहना है कि यहां के मतदाताओं को इससे मतलब नहीं है कि गलती किसकी है. चाहे मामला एमएलसी मनोरमा देवी के बेटे का हो या राजद विधायक राजबल्लभ यादव का या फिर आय से अधिक संपत्ति मामले में फंसे लालू यादव के परिवार का, लोग ये देखते हैं कि नीतीश और भाजपा के निशाने पर सिर्फ यादव जाति के ही नेता क्यों हैं. मगध में जातीय आंकड़े देखे जाएं, तो अनुसूचित जाति के मतदाताओं की संख्या सबसे अधिक है. यही कारण है कि मगध के 26 में से 6 विधानसभा क्षेत्र सुरक्षित हैं. दूसरे स्थान पर यादव जाति के मतदाताओं की संख्या है. तीसरे स्थान पर पिछड़ी जाति के मतदाता आते हैं. चौथे स्थान पर अगड़ी जाति तथा पांचवें स्थान पर मुस्लिम मतदाता आते हैं. ये सभी आंकड़े एक अनुमान पर आधारित हैं. मगध के 26 विधानसभा क्षेत्रों में से आधे पर यादव मतदाताओं की पकड़ बताई जाती है. लेकिन आधा दर्जन क्षेत्र ऐसे हैं, जहां किसी भी दल के यादव प्रत्याशी ही जीत सकते हैं. अब जबकि सत्ताधारी दल का जनप्रतिनिधि रहते भी मनोरमा देवी के परिवार को कानून से कोई राहत नहीं मिली, पुराने मामले भी बिहार सरकार ने खुलवा दिए, तब इनकी जाति के कुछ नेताओं-लोगों का कहना है कि नीतीश कुमार, लालू यादव से झगड़े के कारण यादवों के एक-एक नेता पर बदले की कार्रवाई करा रहे हैं. अब देखना है कि आने वाले समय में मगध की राजनीति में इस मामले का कितना असर होता है.

मनोरमा देवी तथा इनके परिजनों को उम्मीद थी कि सत्ताधारी दल की जनप्रतिनिधि होने के नाते इन्हें सरकार की ओर से कुछ राहत मिलेगी. लेकिन इस सोच के विपरित बिहार सरकार ने रॉकी को पटना हाईकोर्ट से मिली जमानत को सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दे डाली. फलत: रॉकी की जमानत रद्द कर दी गई. इसी के बाद इस मामले को राजनीति और जातीय समीकरण के हिसाब से जोड़कर देखा जाने लगा. बिहार सरकार ने इस हत्याकांड में स्पीडी ट्रायल का आदेश दे दिया. खुद मुख्यमंत्री नीतीश कुमार गया आए, तो उन्होंने पीड़ित परिवार से मुलाकात की.

गौरतलब है कि मनोरमा देवी के पति बिन्दी यादव पर देशद्रोह का आरोप भी लग चुका है. 2011 में हजारों की संख्या में कारतूस के साथ बोधगया पुलिस ने इन्हें गिरफ्तार किया था. इस मामले में बिन्दी यादव सहित चार लोगों पर बोधगया थाना में कांड संख्या 62/11 के अंतर्गत केस दर्ज हुआ था. इस मामले में राज्य सरकार ने अभियोजन स्वीकृति का आदेश दे दिया है. इस आदेश के आलोक में गया एसएसपी के निर्देश पर बोधगया डीएसपी ने गया के सीजेएम की अदालत में चार्जशीट समर्पित कर दिया है. पटना हाईकोर्ट के आदेश पर इसका भी ट्रायल शुरू होने वाला है. इस मामले का ट्रायल शुरू होने के बाद एमएलसी मनोरमा देवी के परिवार की मुश्किलें काफी बढ़ सकती हैं. इन्हीं सब के मद्देनजर मगध के यादवों में अंदर ही अंदर नीतीश कुमार और भाजपा के खिलाफ रोष नजर आ रहा है.■

feedback@chauthiduniya.com

संकट में पवित्र बोधिवृक्ष का अस्तित्व

चौथी दुनिया ब्यूरो

भगवान बुद्ध की ज्ञान भूमि में सबसे पवित्र बोधिवृक्ष का अस्तित्व संकट में आ गया है. पिछले एक दशक से बोधगया के वर्ल्ड हेरिटेज महाबोधि मंदिर परिसर में स्थित बोधिवृक्ष का देहरादून के वन अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा इलाज किया जा रहा है. बावजूद इसके बोधिवृक्ष के अस्तित्व पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं. गत 26 अगस्त को तेज बारिश और हवा के कारण बोधिवृक्ष की बड़ी टहनी टूटकर रेलिंग पर आ गिरी. इसके बाद महाबोधि मंदिर की देख-रेख करने वाले बोधगया मंदिर प्रबंधकारिणी समिति के पदाधिकारियों और बौद्ध धर्मावलम्बियों के माथे पर चिंता की लकीरें खिंच गईं. गौरतलब है कि इसके एक माह पूर्व ही देहरादून के वन अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने गया के जिला पदाधिकारी को बोधिवृक्ष के स्वस्थ होने का प्रमाण पत्र दिया था. दरअसल, बोधिवृक्ष के पूरे पत्ते पेड़ से झड़ गए थे. इसके बाद ये खबर फैल गई कि भगवान बुद्ध को जिस पवित्र बोधिवृक्ष के नीचे ज्ञान की प्राप्ति हुई थी, वो वृक्ष पूरी तरह से सूख गया है. ये स्थिति पूरे एक सप्ताह तक रही. आठ-दस दिनों के बाद बोधिवृक्ष से नए पत्ते निकलने शुरू हुए. इसी बीच बोधगया मंदिर प्रबंधकारिणी समिति ने वन अनुसंधान संस्थान को जानकारी दी कि बोधिवृक्ष के पत्ते पूरी तरह झड़ कर गिर चुके हैं और नए पत्तों के आने का सिलसिला बहुत धीमा है. इसी के बाद वन अनुसंधान संस्थान देहरादून के वैज्ञानिकों ने बोधगया आकर बोधिवृक्ष की जांच की. इस जांच में वैज्ञानिकों ने बताया कि पतझड़ के मौसम में वृक्ष की जो स्वाभाविक प्रक्रिया है, उसी के कारण बोधिवृक्ष के पत्ते गिरे हैं. जल्द ही नए पत्ते आने शुरू हो जाएंगे. इसके बाद वन अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने बोधिवृक्ष की गहन जांच कर यह रिपोर्ट दिया कि यह वृक्ष पूरी तरह से स्वस्थ है. लेकिन 26 अगस्त को बोधिवृक्ष की टहनी टूट गई. जानकारों ने बताया कि बरसात के कारण किसी भी वृक्ष में फंगस

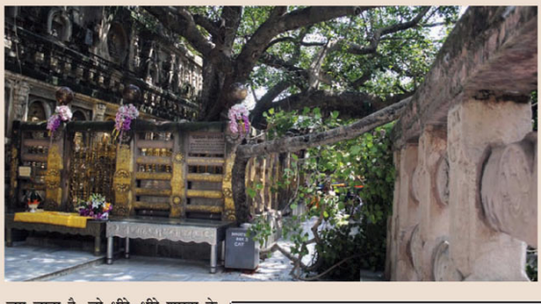

लग जाता है, जो धीरे-धीरे शाखा के अंदरूनी हिस्से को नुकसान पहुंचाता है. ये बात एफआरआई के वैज्ञानिक सह हेड पैथोलॉजिस्ट डा. अमित पांडेय ने बताई. बोधिवृक्ष का उपचार करने पहुंचे इस वैज्ञानिक ने कहा कि फिलहाल बोधिवृक्ष की जांच कर कमजोर व सूखी टहनी को काटकर हटा दिया गया है. एक अन्य वैज्ञानिक डा. सुरेशचंद्र ने कहा कि हेंग्जागोनिया टेंगुइस तथा पॉलिपोरस ग्रेमोसिफेलस के कारण पेड़ में फंगस लग जाता है. बोधिवृक्ष की टहनियों की छंटाई के बाद इसमें चौवटिया लेप लगाया गया है. एक लेप लगने के बाद इसका असर छह माह तक रहता है. इनका ये भी कहना था कि जो टहनी टूटकर गिरी है, वो ओवरवेट थी. उन्होंने बताया कि उक्त टहनी जमीन के समानंतर थी और इसे सूर्य की कम रोशनी मिल रही थी.

सूर्य की रोशनी कम मिलने से प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया सही तरिके से पूरी नहीं हो पा रही थी. इस कारण पेड़ से इसे कम पोषण मिला. साथ ही टहनी को कोई बाहरी सपोर्ट नहीं था. वैज्ञानिकों का ये भी कहना था कि बोधिवृक्ष को अधिक दिन बचाए रखने के लिए प्रयास होना चाहिए. कैनोपी की टहनी को छोटा करने की जरूरत है, ताकि ओवरवेट भी न हो और पेड़ की जड़ों को पर्याप्त धूप मिल सके. फिलहाल बोधिवृक्ष की मेन शाखाओं को सपोर्ट करने के लिए 13 पीलर दिए गए हैं. इसमें अशोका रेलिंग के अंदर 4 तथा बाहर 9 पीलर लगे हैं. वैज्ञानिकों ने बताया कि श्रद्धालुओं के आवागमन के कारण अशोका रेलिंग के आस-पास की मिट्टी दबकर कड़ी हो चुकी है, जिसके कारण बोधिवृक्ष की जड़ों तक हवा नहीं पहुंच पा रही. वैज्ञानिकों ने अपनी जांच-पड़ताल और उपाय के बाद बोधिवृक्ष को खतरे से बाहर बताया है, लेकिन इसे लेकर बौध धर्मावलम्बी अब भी दुखी और चिंतित हैं.■

CRM
TMT BAR
ISO 9001 - 2000 Certified Co.
IS:1786:2008
CM/L-5746178
भूकम्प रोधी
जंग रोधी
Fe-500
मुख्य खूबियाँ
• बचत
• मजबूती
• शानदार फिनीश
Mfg. : CITY ROLLING MILLS PVT. LTD., PATNA
HELPLINE : 0612-2216770

खान-पान और बच्चे का स्वास्थ
ariskon Pharma Pvt. Ltd.
An ISO 9001 : 2008 Certified Co.
प्रिया क्लिनिक केलैटेक्स चौक, किशनगंज
डॉ. दिलीप कुमार (एम.डी.)
पेडियाट्रिक्स केलैटेक्स चौक, किशनगंज
डॉ. दिलिप कुमार जो कि एक कुशल पेडियाट्रिक्स चिकित्सक हैं। इन दिनों बाढ़ विभिषिका में बढ़ रहे सिजनल बीमारियों के बारे में बताया उन्होने कहा कि किशनगंज में इन दिनों बाढ़ के कारण पानी के दूषित हो जाने से भी विभिन्न प्रकार की बीमारियां बढ़ गयी हैं जैसे डायरिया, बुखार सीजनल बीमारियां आदि उन्होंने बताया कि निमोनिया, डायरिया, कफ एण्ड कोल्ड के पेसेन्ट ज्यादा आ रहे हैं। उन्होंने नवजात बच्चों के लिए उनके माता पिता को सलाह देते हुए कहा कि बच्चों के लालन पालन में टेम्प्रेचर कंट्रोल का विशेष ध्यान दें तुरंत एसी या पंखे की हवा के गर्मी ने जाने दें। तथा बच्चों के खान-पान अर्थात बैलेन्स डायट के बारे में भी बतया कि इनके ग्रोथ के लिए पर्याप्त मात्रा में विटामीन, कैलोरी, देना जरूरी है इसके लिए दूध या दूध से बनी चीजें, सीजनल फल, सलाद का प्रयोग, हरी पत्तेदर सब्जीयां, उचित मात्रा में दाल आदि खिलानी चाहिए।
Carbo - XT Drops Susp.
Ferrous Ascorbate100 mg + Folic Acid 1.5 mg + Vitamine B5 mcg Tab.
A Colic Drops
Simethocone Emulsion, Dil Oil Fennel Oil
Siliplex Syp.
Silymarin, vitamin B Complex Calcuium & Lactic Acid Bacillus
Oflogyl-OZ Susp. (60 ml)
Ofloxacine 100 mg & Omindazole 125 mg
Acoba Syp.
Methylocobalamine, Lycopene, Multivitamine Multimineral & Antioxident
बच्चों को संतुलित आहार देने के टिप्स -बच्चों को संतुलित आहार की आदत डालने के लिए जरूरी है कि आप प्रतिदिन अपने बच्चे को 5 अलग-अलग उसकी पसंद के पौष्टिक खाद्य पदार्थ दें। बच्चे को खाने-पीने के लिए जिद ना करें बल्कि बच्चे को प्यार से समझाएं। बच्चें के खाने को कलरफुल बनाने के लिए बच्चे के लिए सलाद, कच्चे फल और सब्जियां काट कर दें जिससे बच्चा शौक-शौक में उसे खाएं। बच्चे को बाहर खेलने की इजाजद दें जिससे बच्चे को अधिक भूख लगेगी तो वह अधिक खाना खाएगा। बच्चे को पौष्टिक खाना खाने की आदत डालें और जंकफूड से बच्चे को दूर रखें। अपरोक्त बच्चों के भोजन संबंधी बातों को ध्यान में रख व इनका पालन व्यवहारिक जीवन में नियम के साथ कराने से आप अपने बच्चे के बेहतर स्वास्थ्य व भविष्य को सुनिश्चित कर सकते हैं।
NOKSIRA Pharma Pvt.Ltd. A Division of AriskonPharma
भारती

कर के बोझ तले दबी 'साधना'

अनंत विजय

'एक देश एक कर' के स्लोगन से प्रचारित होने वाले गुड्स एंड सर्विसेस टैक्स यानि जीएसटी के लागू होने को बड़ा और ऐतिहासिक आर्थिक सुधार माना जा रहा है. आजादी के बाद का अबतक का सबसे बड़ा कर सुधार भी कह सकते हैं. परंतु इस कर सुधार की चपेट में साहित्य, कला और संस्कृति भी आ गए हैं. खास तौर पर उन कलाकारों में इस बात को लेकर रोष है, जो भारतीय शास्त्रीय गायन, वादन और नृत्य आदि कलाओं को अपनी साधना के बूते पर पीढ़ी दर पीढ़ी बचाए हुए हैं. वरिष्ठ कलाकार और परफॉर्मर कला पर जीएसटी लगाने के खिलाफ हैं. उनका कहना है कि उनसे दस फीसदी टीडीएस तो वसूला ही जा रहा है, इसके अलावा अब उनको अठारह फीसदी जीएसटी भी अपनी जेब से भरना पड़ रहा है. इसको लेकर इन वरिष्ठ कलाकारों में इतना गुस्सा भर रहा है कि वो सामूहिक रूप से प्रदर्शन तक करने की बात करने लगे हैं. कलाकारों का कहना है कि भारतीय शास्त्रीय गायन, वादन और नृत्य पर जीएसटी का बोझ डालना इसलिए उचित नहीं है, क्योंकि कलाकार साधना करता है और साधना पर किसी तरह का टैक्स लगाना उचित नहीं है. संगीत नाटक अकादमी के अध्यक्ष शेखर सेन ने कलाकारों की इन आहत भावनाओं से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को भी अवगत करा दिया है. शेखर सेन ने अपने खत में प्रधानमंत्री को लिखा है कि ये कलाकार भारतीय संस्कृति और कला की सेवा कर रहे हैं. उनके प्रदर्शन पर कर लगाना अन्यायपूर्ण है. शेखर सेन ने इस मामले में प्रधानमंत्री से न्यायोचित कदम उठाने की मांग की है.

पद्म पुरस्कार से सम्मानित कई कलाकारों की भी अपेक्षा है कि सरकार इस कर से उनको मुक्त रखे. एक कलाकार ने तो यहां तक कहा कि अगर आज महान गायिका एम एस सुबुलक्ष्मी जीवित होतीं, तो उनके गायन को क्या सेवा कर के दायरे में लाया जा सकता है. आप लाखों रुपए खर्च कर किसी भी सेवा को प्राप्त कर सकते हैं, किसी सेवा प्रदाता को तैयार कर सकते हैं, लेकिन क्या करोड़ों खर्च करने के बाद भी एक लता मंगेशकर या एक गिरिजा देवी बना सकते हैं? साधना और सेवा के फर्क के अलावा कला संस्कृति की ताकत को समझना होगा. लेकिन अफसोस कि हमारे देश में खासकर इमरजेंसी के बाद से कला संस्कृति और साहित्य को उतनी अहमित नहीं दी गई जितने की वो हकदार है. एक कलाकार ने कहा कि हमारी सरकारों को कला और कलाकार की ताकत का अंदाजा नहीं है कि वो किस तरह से दुश्मनों को नीचा तक दिखा सकती है. उन्होंने लता मंगेशकर का ही उदाहरण देते हुए कहा कि जब पाकिस्तान में लता के गाने बजते हैं, तो पाकिस्तानियों के दिल में एक हूक सी उठती है कि काश हमारे यहां लता होतीं. लता मंगेशकर या गिरिजा देवी या शिवकुमार शर्मा या पंडित विश्वमोहन भट्ट ये सभी कलाकार हमारे देश की ताकत हैं. ऐसी ताकत जो गहरे तक असर करती है और हमारा सर पूरी दुनिया में ऊंचा कर देते हैं.

चंद सालों पहले जब यूपीए सरकार ने सर्विस टैक्स लगाना शुरू किया था, उस वक्त भी कलाकारों को उससे बाहर रखा गया था, लेकिन जीएसटी लागू करते वक्त प्रादर्श कला को कर के दायरे में ला दिया गया. हालांकि जीएसटी कंज्यूमर पर लगने वाला टैक्स है. प्रादर्श कला के इन कलाकारों के मामले में भी उनको सुनने आने वाले श्रोताओं से ये टैक्स वसूला जाना चाहिए. टिकट पर कर लगना चाहिए और आयोजक टैक्स जमा कर तमाम औपचारिकताएं पूरी करें. लेकिन हमारे देश में तो शास्त्रीय गीत, संगीत, वादन, नृत्य पर टिकट लगाकर श्रोताओं को बुलाना दिवास्वप्न सरीखा है. जब बगैर टिकट के श्रोता इनको सुनने आते हैं, तो फिर टैक्स की जिम्मेदारी सीधे तौर पर आयोजकों पर पड़ती है. होता यह है कि आयोजक इन कलाकारों को उनको एक निश्चित राशि देकर प्रदर्शन के लिए बुलाते हैं. आयोजक भी जीएसटी से अपना पल्ला झाड़ लेते हैं, क्योंकि अठारह फीसदी काफी होता है. अंतत: इस टैक्स की जिम्मेदारी आ जाती है कलाकारों पर. रूपांकर कला के कलाकार अपने मानदेय के साथ-साथ लगने वाले जीएसटी की राशि की मांग आयोजकों से नहीं कर पाते हैं, क्योंकि इस तरह के आयोजन होते ही कम हैं और जो आयोजक होते हैं, वो और वित्तीय बोझ वहन करने को तैयार नहीं होते हैं. उनका तर्क होता है कि वो तो कला संस्कृति को बचाने और उसको आम लोगों तक पहुंचाने के लिए आयोजन कर रहे हैं. व्यावसायिक आयोजन कर पैसा कमाना उनका उद्देश्य नहीं है, हो भी नहीं सकता. लिहाजा कलाकारों को अपने मानदेय से जीएसटी भरना पड़ता है.

चंद सालों पहले जब यूपीए सरकार ने सर्विस टैक्स लगाना शुरू किया था, उस वक्त भी कलाकारों को उससे बाहर रखा गया था, लेकिन जीएसटी लागू करते वक्त प्रादर्श कला को कर के दायरे में ला दिया गया. हालांकि जीएसटी कंज्यूमर पर लगने वाला टैक्स है. प्रादर्श कला के इन कलाकारों के मामले में भी उनको सुनने आने वाले श्रोताओं से ये टैक्स वसूला जाना चाहिए. टिकट पर कर लगना चाहिए और आयोजक टैक्स जमा कर तमाम औपचारिकताएं पूरी करें. लेकिन हमारे देश में तो शास्त्रीय गीत, संगीत, वादन, नृत्य पर टिकट लगाकर श्रोताओं को बुलाना दिवास्वप्न सरीखा है. जब बगैर टिकट के श्रोता इनको सुनने आते हैं, तो फिर टैक्स की जिम्मेदारी सीधे तौर पर आयोजकों पर पड़ती है. होता यह है कि आयोजक इन कलाकारों को उनको एक निश्चित राशि देकर प्रदर्शन के लिए बुलाते हैं. आयोजक भी जीएसटी से अपना पल्ला झाड़ लेते हैं, क्योंकि अठारह फीसदी काफी होता है. अंतत: इस टैक्स की जिम्मेदारी आ जाती है कलाकारों पर.

इसके अलावा जो परफॉर्मिंग कलाकार हैं, उनपर तो दोहरी या तिहरी मार पड़ती है. कोई भी कलाकार अपने साथ टीम लेकर फरफॉर्म करने जाता है. जैसे अगर उदाहरण के तौर पर देखा जाए, तो बिरजू महाराज या हेमा मालिनी जब परफॉर्म करती हैं तो उनके साथ दस बारह लोगों की टीम होती है. कभी ज्यादा भी. अब अगर महाराज जी को या हेमा जी को परफॉर्म करने के लिए बीस लाख का मानदेय मिलता है, तो उसमें से वो अपने शागिर्दों को भी भुगतान करते हैं. शागिर्दों से वो जीएसटी लेते नहीं हैं, लिहाजा शागिर्दों के खाते का जीएसटी भी मुख्य कलाकार के खाते से जाता है. इस परिदृश्य के हिसाब से अगर हम मुख्य कलाकारों की स्थिति पर विचार करें, तो यह पाते हैं कि उनके जो पैसा नहीं मिल रहा है, उनपर भी उनको टैक्स चुकाना पड़ रहा है. दस फीसदी टीडीएस और अठारह फीसदी जीएसटी यानि कुल मिलाकर अट्ठाइस फीसदी टैक्स. अगर इसमें इनकम टैक्स को भी जोड़ लें, तो जो कलाकार तीस फीसदी आयकर के दायरे में हैं, उनको टीडीएस के दस फीसदी का क्रेडिट मिलेगा यानि बीस फीसदी इनकम टैक्स देना होगा और अठारह फीसदी जीएसटी वो दे चुका है. अंतत: कलाकार को अपने मानदेय का अड़तीस फीसदी भरना पड़ रहा है. यह स्थिति चिंताजनक है. हम कलाओं के संरक्षण की जब बात करते हैं, तो इन सब बिंदुओं का ध्यान रखना चाहिए.

मशहूर शास्त्रीय गायिका गिरिजा देवी भी टैक्स के इस पचड़े को लेकर चिंतित हैं. उनका भी यही कहना है कि साधना पर सरकार को टैक्स नहीं लगाना चाहिए. वो तो इस समस्या को कलाकारों की माली हालत से जोड़कर देखती हैं. उनका कहना है कि कलाकारों को नियमित परफॉर्मेंस तो मिलते नहीं है और जो अनियमित प्रदर्शन होते हैं और मानदेय होता है, उससे जीवन यापन मुश्किल होता है. कलाकारों की उम्र बढ़ने के साथ आय भी कम होने लगती है, क्योंकि वो अलग-अलग स्थानों पर जाकर गायन आदि नहीं कर पाते हैं. उनकी तो सरकार को सलाह है कि वरिष्ठ कलाकारों के लिए एक मानदंड तय करके उनको पेंशन दिया जाना चाहिए. कलाकारों को जीएसटी जैसे टैक्स के दायरे से मुक्त रखा जाना चाहिए, ताकि वो मुक्त भाव से अपनी कला को साधने के लिए और मेहनत कर सके. कलाकारों के अलावा लेखकों को मिलने वाली रॉयल्टी पर भी जीएसटी लगाया गया है. लेखक बिरादरी में इसको लेकर चर्चा ज्यादा नहीं है, क्योंकि उनको लग रहा है कि ये प्रकाशक देंगे. अब अगर यहां भी प्रादर्श कला वाली स्थिति होती है, तो जीसटी की ये राशि भी लेखक की रायल्टी से ही जाएगी.

जैसा कि उपर कहा गया कि संस्कृति और कला को हमारे यहां प्राथमिकता नहीं मिली, संस्कृति मंत्री के पद पर ऐसे ऐसे महानुभाव बैठे हैं कि कुछ कहा ही नहीं जा सकता है. उत्तर प्रदेश में योगी आदित्यनाथ के मुख्यमंत्री बनने के बाद से तीन बार संस्कृति सचिव बदले जा चुके हैं और केंद्र में तो कई महीनों से संस्कृति सचिव का पद खाली है. इस पूरे परिदृश्य पर विंस्टन चर्चिल से जुड़ा एक वाकया याद आ रहा है, जो एक बड़े कलाकार के साथ आपसी बातचीत में कभी आया था. ब्रिटेन द्वितीय विश्वयुद्ध में शामिल होने जा रहा था. विंस्टन चर्चिल ने अपने सभी मंत्रियों को बैठक के लिए बुलाया. उस बैठक में चर्चिल ने एक प्रस्ताव रखा कि चूंकि ब्रिटेन युद्ध में जा रहा है इसलिए सभी मंत्रियों को अपने-अपने विभागों का बजट सरेंडर कर देना चाहिए. उन्होंने सभी मंत्रियों से इस आशय के पत्र पर हस्ताक्षर करने का भी अनुरोध किया. सभी मंत्रियों ने उस प्रस्ताव पर दस्तखत कर दिया. सबसे अंत में वहां के संस्कृति मंत्री उठे और प्रस्ताव पर अपने हस्ताक्षर करने को आगे बढ़े. चर्चिल ने उनको रोका और कहा कि आप रहने दीजिए, जिसके लिए हम युद्ध करने जा रहे हैं, जिसको बचाए रखने के लिए हम अपनी पूरी ताकत झोंकने जा रहे हैं, उसका बजट सरेंडर करवाना उचित नहीं होगा. इति. ■

anant.ibn@gmail.com

मिड-डे-मील की गड़बड़ियों का पता लगाएं

चौथी दुनिया ब्यूरो

स्कूलों में बच्चों को दिए जाने वाले मिड-डे-मील में अनियमितता आम बात है. आए दिन इसे लेकर खबरें आती हैं. कई जगह स्कूलों में राशन नहीं पहुंच पाता, तो कई जगह स्कूलों से ही गलत तरीके से राशन की बिक्री कर दी जाती है. एक आम अभिभावक इस कुव्यवस्था और भ्रष्टाचार के दलदल से अवगत नहीं हो पाता. कई लोगों को ये भी नहीं पता कि मध्याह्न भोजन योजना में होने वाली अनियमितता को रोकने के लिए आरटीआई का सहारा लिया जा सकता है. एक आम आदमी भी आरटीआई के जरिए ये जान सकता है कि उसके बच्चे के लिए सरकार जो राशन भेज रही है, वो उन तक पहुंच रहा है कि नहीं और नहीं पहुंच रहा है, तो क्यों. इसके लिए हम आपको आवेदन के प्रारूप के बारे में बता रहे हैं.

सूचना का अधिकार
RIGHT TO INFORMATION

सेवा में,
लोक सूचना अधिकारी
(विभाग का नाम)
(विभाग का पता)

विषय : सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत आवेदन.

महोदय,

..... के प्राथमिक विद्यालय के मध्याह्न भोजन योजना के सम्बंध में सूचना के अधिकार के तहत निम्नलिखित सूचनाएं उपलब्ध कराएं:

1. उपरोक्त विद्यालय में मध्याह्न भोजन योजना का विवरण निम्नलिखित ब्यौरे के साथ दें:

(क) दिनांक..... से..... के दौरान उपरोक्त स्कूल को उपलब्ध कराई गई खाद्य-सामग्री का विवरण (मासिक ब्यौरे के साथ) उपलब्ध कराएं.

(ख) विभागीय रिकॉर्ड के अनुसार उपरोक्त खाद्य-सामग्री कितने विद्यार्थियों को वितरित की जानी थी?

(ग) यह खाद्य-सामग्री किस राशन दुकानदार/एजेंसी के माध्यम से उपलब्ध कराई गई?

(घ) उपरोक्त दुकान/एजेंसी का चुनाव किस प्रकार किया गया? इस सम्बंध में सरकार द्वारा जारी किए गये सभी नियमों/आदेशों/दिशा-निर्देशों की प्रमाणित प्रति उपलब्ध कराएं.

(ड.) इस दौरान विभाग द्वारा विद्यालय को खाद्य-सामग्री उपलब्ध कराने से सम्बंधित सभी आदेशों की प्रमाणित प्रतियां भी उपलब्ध कराएं.

2. मध्याह्न भोजन योजना को बेहतर ढंग से लागू कराने एवं गुणवत्ता बनाये रखने से सम्बंधित सरकार व विभाग द्वारा जारी शासनादेशों/दिशानिर्देशों कि प्रमाणित प्रतियां उपलब्ध कराएं.

3. मध्याह्न भोजन योजना में कालाबाजारी/भ्रष्टाचार आदि के रोकथाम के लिए विभाग द्वारा की गई व्यवस्था से सम्बंधित सभी दिशानिर्देशों/नियमों/कानूनों की प्रमाणित प्रतियां उपलब्ध कराएं.

4. दिनांक..... से..... के दौरान उपरोक्त विद्यालय से क्या विभाग को मध्याह्न भोजन योजना के सम्बंध में कोई शिकायत प्राप्त हुई है? यदि हां, तो शिकायतकर्ता का नाम, पता, शिकायत पर की गई कार्यवाही का विवरण एवं यदि इस सम्बन्ध में कोई जांच की गई है, तो जांच रिपोर्ट की प्रति भी उपलब्ध कराएं.

5. मध्याह्न भोजन योजना के अन्तर्गत स्वीकृत खाद्य-सामग्री यदि किसी कारणवश किसी विद्यालय द्वारा उपयोग नही की जाती है, तो उस खाद्य-सामग्री के निष्पादन की विभाग ने क्या व्यवस्था की है? इससे सम्बंधित नीतियों/दिशा-निर्देशों की प्रमाणित प्रतियां उपलब्ध कराएं.

6. मध्याह्न भोजन योजना से सम्बंधित विभिन्न नियमों, निर्देशों, आदेशों एवं सर्कुलर की प्रमाणित प्रति उपलब्ध कराएं.

मैं आवेदन फीस के रूप में 10 रुपए अलग से जमा कर रहा/रही हूं.

या

मैं बीपीएल कार्ड धारी हूं, इसलिए सभी देय शुल्कों से मुक्त हूं. मेरा बीपीएल कार्ड नं..... है.

यदि मांगी गई सूचना आपके विभाग/कार्यालय से सम्बंधित नहीं हो, तो सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 6 (3) का संज्ञान लेते हुए मेरा आवेदन सम्बंधित लोक सूचना अधिकारी को पांच दिनों के समयावधि के अन्तर्गत हस्तान्तरित करें. साथ ही अधिनियम के प्रावधानों के तहत सूचना उपलब्ध कराते समय प्रथम अपील अधिकारी का नाम व पता अवश्य बताएं.

भवदीय
नाम:
पता:
फोन नं:
संलग्नक:
(यदि कुछ हो)

feedback@chauthiduniya.com

अगर आपके पास आरटीआई से संबंधित कोई ख़बर या सवाल है, तो हमें इमेल करें:
rti@chauthiduniya.com

जयंती विशेष

एकात्म मानववाद के प्रवर्तक दीनदयाल उपाध्याय

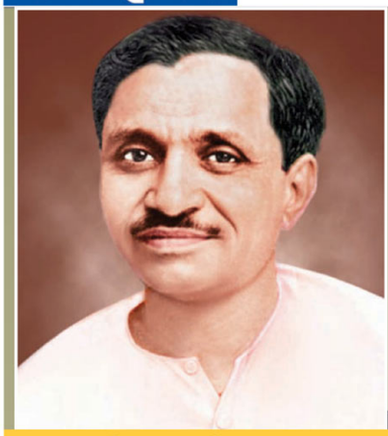

जन्मदिन-25 सितम्बर, 1916
पुण्यतिथि-11 फ़रवरी, 1968

दीनदयाल उपाध्याय देश और समाज को सही दिशा देने के अपने काम में पूरी लगन के साथ लगे रहे, लेकिन शायद नियति को कुछ और ही मंजूर था. समाज को एकात्म मानववाद का दर्शन और देश को जनसंघ के रूप में राजनीतिक विकल्प देने वाला ये सितारा असमय ही डूब गया. वो 11 फ़रवरी, 1968 की सुबह थी, जब मुग़ल सराय रेलवे स्टेशन पर दीनदयाल उपाध्याय का शरीर निष्प्राण अवस्था में मिला.

चौथी दुनिया ब्यूरो

डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने एकबार कहा था कि 'यदि मेरे पास दो दीनदयाल हों, तो मैं भारत का राजनीतिक चेहरा बदल सकता हूं'. दीनदयाल उपाध्याय के जीवन को नजदीक से देखने पर पता चलता है कि उन्होंने अपनी पूरी जिंदगी समाज और देश को समर्पित कर दी थी. वे न सिर्फ एक राजनेता और विचारक बल्कि समाजशास्त्री, इतिहासकार और पत्रकार भी थे. उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के निर्माण में महत्वपूर्ण भागीदारी निभाई और भारतीय जनसंघ (वर्तमान भारतीय जनता पार्टी) के अध्यक्ष भी बने. दीनदयाल उपाध्याय की इमानदारी का एक किस्सा मशहूर है. एक बार पंडित दीनदयाल उपाध्याय रेलगाड़ी से यात्रा कर रहे थे. इत्तेफाक से उसी रेलगाड़ी मे गुरु गोलवरकर भी यात्रा कर रहे थे. जब गोलवलकर को यह पता चला कि उपाध्याय भी इसी रेलगाड़ी में हैं, तो उन्होंने खबर भेजकर उनको अपने पास बुलवा लिया. उपाध्याय आए और लगभग एक घंटे तक सेकेंड क्लास के डिब्बे में गुरु गोलवलकर के साथ बातचीत करते रहे. उसके बाद वे अगले स्टेशन पर थर्ड क्लास के अपने डिब्बे में वापस चले गए. अपने डिब्बे में वापस जाते समय टीटीई के पास गए और बोले- श्रीमान मैंने लगभग एक घंटे तक सेकेंड क्लास के डिब्बे में यात्रा किया है, जबकि मेरे पास थर्ड क्लास का टिकट है. नियम के हिसाब से मेरा एक घंटे का जो भी किराया बनता है. वह आप मेरे से ले लीजिए. ये सुनकर टीटीई ने कहा कि कोई बात नहीं, आप अपने डिब्बे में चले जाइए. आखिर जब दीनदयाल नहीं माने और पीछे ही पड़ गए, तो टीटीई ने दो घंटे का किराया जोड़ा और उनसे ले लिया.

दीनदयाल उपाध्याय का जन्म राजस्थान के धन्किया में एक मध्यम वर्गीय प्रतिष्ठित हिंदू परिवार में 25 सितम्बर, 1916 को हुआ था. उनके पिता का नाम श्री भगवती प्रसाद उपाध्याय तथा मां का नाम रामप्यारी था. उनके पिता जलेसर में सहायक स्टेशन मास्टर के रूप में कार्यरत थे और मां बहुत ही धार्मिक विचारधारा वाली महिला थीं. इनके छोटे भाई का नाम शिवदयाल उपाध्याय था. बालक दीनदयाल की उम्र जब मात्र ढाई वर्ष की थी, तभी उनके पिता का असामयिक निधन हो गया. इसके बाद उनका परिवार उनके नाना के साथ रहने लगा. यहां उनका परिवार अभी दुखों से उबरने का प्रयास कर ही रहा था कि तपेदिक रोग के इलाज के दौरान उनकी मां दो छोटे बच्चों को छोड़कर चल बसीं. सिर्फ यही नहीं, जब वे मात्र 10 वर्ष के थे, तब उनके नाना का भी निधन हो गया. उनके मामा ने अपने बच्चों की तरह उनका पालन-पोषण किया. छोटी अवस्था में ही अपना ध्यान रखने के साथ-साथ उन्होंने अपने छोटे भाई के अभिभावक का दायित्व भी निभाया परन्तु दुर्भाग्य से भाई को चेचक की बीमारी हो गई और 18 नवंबर, 1934 को उसका निधन हो गया. दीनदयाल ने बेहद कम ऊम्र की जिंदगी में ही अनेक उतार-चढ़ाव देखे, लेकिन वे मजबूती के साथ आगे बढ़ते रहे.

दीनदयाल उपाध्याय ने सीकर से हाई स्कूल की परीक्षा पास की. वे जन्म से बुद्धिमान और उज्जवल प्रतिभा के धनी थे. स्कूल और कॉलेज में अध्ययन के दौरान उन्हें कई स्वर्ण पदक और प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त हुए. उन्होंने अपनी स्कूल की शिक्षा जीडी बिड़ला कॉलेज, पिलानी और स्नातक की शिक्षा कानपुर विश्वविद्यालय के सनातन धर्म कॉलेज से पूरी की. दीनदयाल उपाध्याय अपने जीवन के प्रारंभिक वर्षों से ही समाज सेवा के प्रति समर्पित रहे. 1937 में अपने कॉलेज के दिनों में ही कानपुर में वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के साथ जुड़

गए थे. वे आरएसएस के संस्थापक डॉ. हेडगेवार से बहुत प्रभावित थे. 1942 में कॉलेज की शिक्षा पूर्ण करने के बाद उन्होंने न तो नौकरी के लिए प्रयास किया और न ही विवाह की, वे संघ की शिक्षा का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए आरएसएस के 40 दिवसीय शिविर में भाग लेने नागपुर चले गए. इसके बाद तो उन्होंने अपने आप को पूरी तरह से संगठन के प्रति समर्पित कर दिया.

1951 में जब डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने भारतीय जनसंघ की स्थापना की, तो दीनदयाल उपाध्याय को इसका प्रथम महासचिव बनाया गया. वे दिसंबर 1967 तक लगातार इस पद पर रहे. 1967 में ही कालीकट में भारतीय जनसंघ के 14वें वार्षिक अधिवेशन में दीनदयाल उपाध्याय को जनसंघ का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया. दीनदयाल उपाध्याय का मानना था कि आजादी के बाद भारत के विकास का आधार भारतीय संस्कृति हो न कि अंग्रेजों द्वारा छोड़ी गई पश्चिमी सभ्यता वाली विचारधारा. दीनदयाल उपाध्याय द्वारा दी गई 'एकात्म मानववाद' की अवधारणा आज भी लोकप्रिय है. उनके अनुसार 'एकात्म मानववाद' प्रत्येक मनुष्य के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा का एक एकीकृत कार्यक्रम है. उन्होंने कहा कि एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में भारत पश्चिमी अवधारणाओं जैसे व्यक्तिवाद, लोकतंत्र, समाजवाद, साम्यवाद और पूंजीवाद पर निर्भर नहीं हो सकता है. भारतीय मेधा पश्चिमी सिद्धांतों और विचारधाराओं से घुटन महसूस कर रही है, परिणामस्वरूप मौलिक भारतीय विचारधारा के विकास और विस्तार में बहुत बाधा आ रही है.

दीनदयाल उपाध्याय साहित्य और पत्रकारिता से भी लंबे वक्त तक जुड़े रहे. 1940 के दशक में उन्होंने लखनऊ से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका राष्ट्र धर्म में काम किया. आरएसएस में रहते हुए उन्होंने एक साप्ताहिक समाचार पत्र 'पांचजन्य' और एक दैनिक समाचार पत्र 'स्वदेश' शुरू किया था. उन्होंने नाटक 'चंद्रगुप्त मौर्य' और हिन्दी में शंकराचार्य की जीवनी भी लिखी थी. उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ. केबी हेडगेवार की जीवनी का मराठी से हिंदी में अनुवाद किया. उनकी अन्य प्रसिद्ध साहित्यिक कृतियों में 'सम्राट चंद्रगुप्त', 'जगतगुरू शंकराचार्य', 'अखंड भारत क्यों हैं', 'राष्ट्रजीवन की समस्याएं', 'राष्ट्र चिंतन' और 'राष्ट्र जीवन की दिशा' आदि हैं.

दीनदयाल उपाध्याय देश और समाज को सही दिशा देने के अपने काम में पूरी लगन के साथ लगे रहे, लेकिन शायद नियति को कुछ और ही मंजूर था. समाज को एकात्म मानववाद का दर्शन और देश को जनसंघ के रूप में राजनीतिक विकल्प देने वाला ये सितारा असमय ही डूब गया. वो 11 फ़रवरी, 1968 की सुबह थी, जब मुग़ल सराय रेलवे स्टेशन पर दीनदयाल उपाध्याय का शरीर निष्प्राण अवस्था में मिला. ये खबर जंगल के आग की तरह फैली और पूरा देश शोक में डूब गया. इस महान नेता को श्रद्धांजलि देने के लिए राजेंद्र प्रसाद मार्ग पर भारी भीड़ उमड़ी थी. उन्हें 12 फरवरी, 1968 को भारत के तत्कालीन राष्ट्र पति डॉ. जाकिर हुसैन, प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी और मोरारजी देसाई द्वारा श्रद्धांजलि अर्पित की गई. लेकिन उनकी मौत एक अनसुलझी पहेली बनी रही, आजतक उनकी मौत के कारणों से पर्दा नहीं हट पाया है. ■

feedback@chauthiduniya.com

जापानी इन्सेफेलाइटिस
लक्षण और बचाव

जब किसी व्यक्ति को क्यूलेक्स मच्छर काट लेता है, तो उसको जापानी इंसेफ़लाइटिस या मस्तिष्क ज्वर हो जाता है. इससे प्रभावित व्यक्ति के मस्तिष्क के अंदर ब्रेन पेरेनकाइमा में सूजन हो जाती है. जिससे ब्रेन स्टेम और थैलमा को नुक़सान होता है. इसके कारण मरीज कोमा में जा सकता है. इस बीमारी में ऑर्गन फेल्योर का खतरा ज्यादा रहता है. वर्तमान में भारत के 182 ज़िले इस बीमारी की चपेट में हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो

मच्छर जनित रोगों में सबसे भयंकर है, जापानी इन्सेफेलाइटिस, जो क्यूलेक्स मच्छर के काटने से होता है. इसे एक्यूट इंसेफ़्लाइटिस सिंड्रोम भी कहा जाता है. इसका सामान्य नाम मस्तिष्क ज्वर या दिमाग़ी बुखार है. इस बीमारी से ग्रस्त लगभग 70 फीसदी लोग दम तोड़ देते हैं. वहीं, जो बच जाते हैं, उन्हें ये बीमारी अपंग करके छोड़ देती है. 15 वर्ष से कम उम्र के बच्चे और 65 वर्ष से अधिक उम्र के बुजुर्ग इसकी चपेट में ज्यादा आते हैं. अगस्त, सितंबर और अक्टूबर के महीने में जब धान की खेती का समय होता है, तब इस बीमारी का खतरा ज्यादा रहता है, क्योंकि इसके मच्छर मुख्य रूप से धान के खेतों में पनपते हैं. जब किसी व्यक्ति को क्यूलेक्स मच्छर काट लेता है, तो उसको जापानी इंसेफ़्लाइटिस या मस्तिष्क ज्वर हो जाता है. इससे प्रभावित व्यक्ति के मस्तिष्क के अंदर ब्रेन पेरेनकाइमा में सूजन हो जाती है. जिससे ब्रेन स्टेम और थैलमा को नुक़सान होता है. इसके कारण मरीज कोमा में जा सकता है. इस बीमारी में ऑर्गन फेल्योर का खतरा ज्यादा रहता है. वर्तमान में भारत के 182 ज़िले इस बीमारी की चपेट में हैं. जापानी इन्सेफेलाइटिस के कारण गोरखपुर के बीआरडी मेडिकल कॉलेज में हो रही बच्चों की मौत अब भी अनवरत जारी है. बीते एक महीने में ही 60 से ज्यादा लोग इसके शिकार हो चुके हैं, जिनमें ज्यादातर बच्चे हैं. ये बीमारी बहुत ही खतरनाक है, जिसके लक्षण और बचाव को जानना बेहद जरूरी है.

लक्षण

थकान, चिड़चिड़ापन, तेज़ बुखार, शरीर में तेजदर्द, सिर दर्द, आंखें लाल होना, मुंह से झाग निकलना, झटके लगना, बेहोशी, सांस लेने में दिक्कत, दांत बंध जाना,

आंखें चढ़ जाना, हाथों-पैरों में अकड़न आदि मस्तिष्क ज्वर के लक्षण हैं. नन्हे बच्चों और शिशुओं में इस बीमारी के लक्षण हैं- खोपड़ी में उभरी हुई चित्ती, बच्चे के शरीर में जकड़न होना, दूध कम पीना, चिड़चिड़ापन एवं बात-बात पर रोना.

जांच

मस्तिष्क ज्वर की पुष्टि के लिए ख़ून की जांच और सीएसएफ़ की जांच की जाती है. ब्रेन का सीटी स्कैन कराना भी बहुत जरूरी होता है.

बच्चों में यह रोग ज्यादा देखने को मिलता है, ऐसे में कोशिश करें कि बच्चों को पूरे कपड़े ही पहनाएं ताकि उनकी स्कीन ढकी रहें. अगर आपका बच्चा अभी-अभी इस दुनिया में आया है, तो उसका बचाव करना बहुत जरूरी है. घर में कीट प्रतिकर्षकों का उपयोग करना ना भूलें, इसके इस्तेमाल से मच्छर और अन्य कीट काट नहीं पाएंगे.

बचाव

बच्चों में यह रोग ज्यादा देखने को मिलता है, ऐसे में कोशिश करें कि बच्चों को पूरे कपड़े ही पहनाएं ताकि उनकी स्कीन ढकी रहें. अगर आपका बच्चा अभी-अभी इस दुनिया में आया है, तो उसका बचाव करना बहुत जरूरी है. घर में कीट प्रतिकर्षकों का उपयोग करना ना भूलें, इसके इस्तेमाल से मच्छर और अन्य कीट काट नहीं पाएंगे. शाम को अंधेरा होते ही बाहर निकलना बंद कर दें, क्योंकि यही वह समय होता है जब मच्छर जैसे काटने वाले कीट अधिक सक्रिय हो जाते हैं. बचाव के अन्य उपाय निम्नलिखित हैं:

- कोशिश करें कि आपके आसपास गंदगी न हो.
- समय से टीकाकरण कराएं.
- गंदे पानी के संपर्क में न आएं.
- बारिश के मौसम में खानपान का ज्यादा ध्यान रखें.
- साफ-सुथरा पानी पीएं.
- मच्छरों से बचाव के लिए उचित इंतजाम करें. ■

feedback@chauthiduniya.com

जेडी का पॉपकॉर्न कलेक्शन होगा सरकार-3 की कमाई से ज्यादाः अमर सिंह

राजनेता अमर सिंह ने एक बार फिर अपने पुराने दोस्त अमिताभ बच्चन पर निशाना साधा है. वह मुंबई में पत्रकार-निर्देशक शैलेंद्र पांडे की फिल्म जेडी प्रमोशन के मौके पर बोल रहे थे. अमर सिंह ने कहा कि आज कंटेंट किंग है, इसलिए अमिताभ बच्चन जैसे सुपर स्टार की सरकार-3 की कमाई से ज्यादा कलेक्शन जेडी की पॉपकॉर्न बिक्री का रहेगा. जेडी कंटेंट सिनेमा है, जिसमें पत्रकारों के जीवन की हक़ीक़त और मीडिया दफ्तरों की सच्चाई दिखाई जाएगी. पूर्व सांसद अमर सिंह फिल्म में ईमानदार राजनेता की भूमिका में हैं. फिल्म 22 सितंबर को देश भर के सिनेमाघरों में रिलीज हो चुकी है. देश के प्रसिद्ध फोटो जर्नलिस्ट, निर्माता-निर्देशक शैलेंद्र पांडे की फिल्म जेडी पर अमर सिंह ने कहा, यह पत्रकारों के साथ नेताओं को भी देखनी चाहिए. इसमें बताया गया है कि कैसे मीडिया घराने इन दिनों अपने किचन में ख़बरें पकाते हैं. मैं कई बार ऐसी किचन पत्रकारिता का शिकार बना हूं. उन्होंने कहा कि यह कंटेंट सिनेमा का दौर है. अमिताभ, शाहरुख और सलमान जैसे सितारों की फिल्में बॉक्स ऑफिस पर फ्लॉप हो रही हैं. उन्होंने जेडी की सफलता का दावा करते हुए कहा कि इस फिल्म का पॉपकॉर्न कलेक्शन पिछले दिनों आई अमिताभ बच्चन की सरकार-3 की कुल कमाई से ज्यादा होगा. उन्होंने कहा कि शैलेंद्र पांडे की फिल्म से वह केवल कंटेंट की वजह से जुड़े. जबकि उनकी शैलेंद्र से पहले कोई मुलाकात या जान-पहचान नहीं थी. म्यूजिक रिलीज के मौके पर फिल्म की स्टारकास्ट मौजूद थी. जेडी में ललित बिष्ट और वेदिता प्रताप सिंह मुख्य भूमिकाओं में हैं. अमन वर्मा और गोविंद नामदेव अहम भूमिकाओं में हैं. फिल्म का संगीत गणेश पांडे और जांनिसार लोन ने तैयार किया है. ममता शर्मा, राजा हसन, अल्तमस फ़रीदी, आबिद ज़माल और रानी हज़ारिका ने गीत गाए हैं. ■